INTERNATIONAL MAGAZINE

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै।।

आत्म मार्ग

January 2019

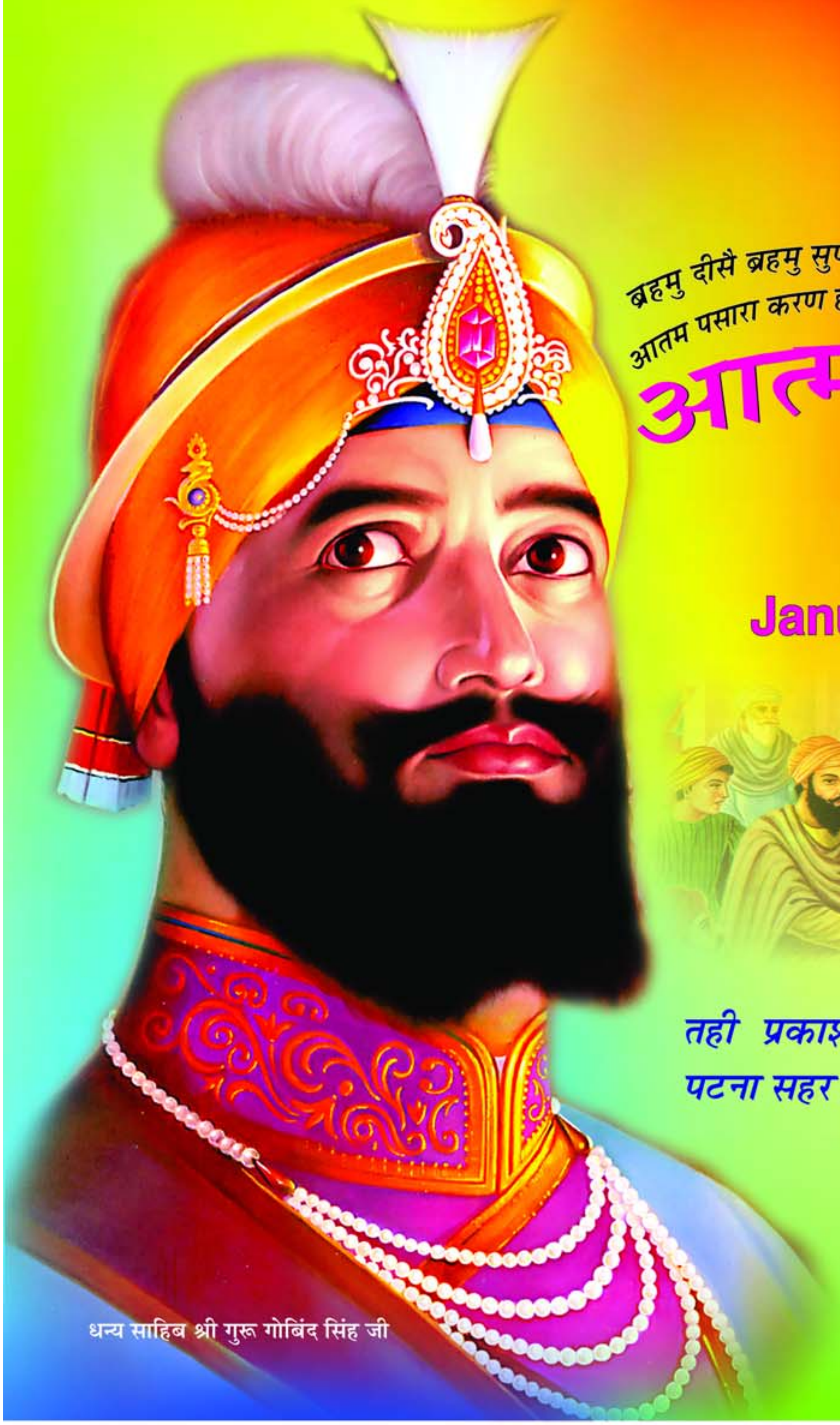

तही प्रकाश हमारा भयो।।
पटना सहर विखै भव लयो।।

धन्य साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंह जी

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी अमेरिका के सैनहोज़े में 'सिक्ख गुरद्वारा साहिब' में संगत को कीर्तन द्वारा कृतार्थ करते हुए

आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक बाहरवां, जनवरी 2019

गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

प्रबन्ध सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह

मुख्य सम्पादक
डा. जगजीत सिंह (97798 16909)

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका – बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा – भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस – मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड – बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,

भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(CBSE) - 0160-2255003**

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(PSEB)** अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर

98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7
डा. जगजीत सिंह

3. श्री गुरू गोबिंद सिंह जी 11
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. बाबाणियाँ कहानियाँ 26
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. बिनु हरि भजन नाही छुटकारा 28
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. आत्म ज्ञान 34
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

7. ब्रहम गिआनी सद जीवै नहीं मरता 38
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

8. गुरबाणी अर्थ भण्डार 42
सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

9. नूरानी मिलाप 45
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

10. बारां भाई गुरदास 46
डा. भाई बीर सिंह जी

11. भाई नन्द लाल जी 48

12. गुरु नानक आगमन 50
डा. भाई वीर सिंह जी

13. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
डा. स्वामी राम जी

14. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

अंग्रेजी माह के अनुसार आत्म मार्ग के समस्त पाठकों को अकालपुरुष की कृपा के माध्यम से नव वर्ष मुबारक। आने वाला समय सबके लिए खुशियों व उल्लास भरा हो।

आगै सुखु मेरे मीता ॥ पाछे आनदु प्रभि कीता ॥
अंग - 629

आगाहा कू त्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा ॥
अंग - 1096

के लिए प्रार्थना है तथा नवीन जीवन युक्ति के लिए उद्यम भी है।

समय के पदचिन्हों ने इतिहास बनाया है। समय के अन्तराल ने इतिहास का सृजन किया है जिसमें कि मीठे व कड़वे अनुभव छिपे हुए हैं। समय परिवर्तनशील है। डा. भाई वीर सिंह जी के अनुसार -

रही वासते घ्त समें ने इक ना मंनी।
फड़ फड़ रही धरीक, 'समें' खिसकाई कंनी।
किवें न सूकी रोक अटक जो पाई भंनी।
त्रिखे अपणे वेग गिआ टप बंने बंनी।
होश! अजे संभल इस समें नूं,
कर सफल उडंदा जाँवदा,
इह ठहिरन जाच न जाणदा
लंघ गिआ न मुड़ के आँवदा।

डा. भाई वीर सिंघ जी

समय के अन्दर परिवर्तन हैं और यह करवट लेता है। बड़ों-बड़ों को समय ने रुलाया भी है तथा हँसाया भी है। इसने खुशियाँ भी दिखाई हैं तथा दुखदाई बनकर भी आया है -

सहंसर दान दे इंदु रोआइआ ॥
परस रामु रोवै घरि आइआ ॥
अजै सु रोवै भीखिआ खाइ ॥
ऐसी दरगह मिलै सजाइ ॥
रोवै रामु निकाला भइआ ॥
सीता लखमणु विछुड़ि गइआ ॥
रोवै दहसिरु लंक गवाइ ॥
जिनि सीता आदी डउरु वाइ ॥
रोवहि पाँडह भए मजूर ॥
जिन कै सुआमी रहत हदूरि ॥
रोवै जनमेजा खुइ गइआ ॥
एकी कारणि पापी भइआ ॥
रोवहि सेख मसाइक पीर ॥
अंति कालि मतु लागै भीड़ ॥
रोवहि राजे कंन पड़ाइ ॥
घरि घरि मागहि भीखिआ जाइ ॥
रोवहि किरपन संचहि धनु जाइ ॥
पंडित रोवहि गिआनु गवाइ ॥
बाली रोवै नाहि भतारु ॥
नानक दुखीआ सभु संसारु ॥
मंने नाउ सोई जिणि जाइ ॥
अउरी करम न लेखै लाइ ॥ *अंग - 954*

नाम के साथ जुड़ी हुई शख्सियत सदा उल्लास में है, आनन्द में है - नानक भगता सदा विगासु।।

ओथै अंम्रितु वंडीऐ सुखीआ हरि करणे ॥
जम कै पंथि न पाईअहि फिरि नाही मरणे ॥
जिस नो आइआ प्रेम रसु तिसै ही जरणे ॥
बाणी उचरहि साध जन अमिउ चलहि झरणे ॥ पेखि
दरसनु नानकु जीविआ मन अंदरि धरणे ॥
अंग - 320

सदा का आनंद है, उल्लास है, 'अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरु मै पाइआ।।' की प्रत्यक्ष रूपमानता है। यदि समय की तरफ हम दृष्टि डालें और इसके व्यवहारिक रूप के इतिहास को देखें तो यह परिवर्तनशील है। ठीक इसी प्रकार से जीव की यात्रा भी चलायमान है -

कई जनम भए कीट पतंगा ॥
कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ 1 ॥
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥
चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
कई जनम सैल गिरि करिआ ॥
कई जनम गरभ हिरि खरिआ ॥
कई जनम साख करि उपाइआ ॥
लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ ॥ *अंग - 176*

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही ॥
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही॥
अंग - 631

लख चउरासीह जोनि सबाई ॥
माणस कउ प्रभि दीओ वडिआई ॥
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै
सो आइ जाइ दुखु पाइदा ॥ अंग - 1075

करोड़ों-खरबों सालों से इस जीव का सफर जारी है और इसके समाप्त होने का कोई अनुमान नहीं है। यदि समर्थ सतगुरू कृपा कर दे और नाम की दात प्रदान कर दे तो इस सफर को विश्राम दिया जा सकता है -

जंमणु मरणु न तिन् कउ जो हरि लड़ि लागे ॥
अंग - 322

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए॥
अंग - 749

सफल सफल भई सफल जात्रा ॥
आवण जाण रहे मिले साधा ॥ अंग - 687

उपुर्यक्त विचार से यह स्पष्ट होता है कि समय 'हुक्म' के अधीन है और परमात्मा के नियमानुसार चल रहा है लेकिन यह जीव जो है, यह हुक्म के अधीन नहीं चलना चाहता है, यह बेलगाम होकर विचरण करना चाहता है। समय, चन्द्र व सूर्य की गति के अनुसार चलता है, इसलिए जीव ने भी किसी गति को धारण करना है। इस जीव की यात्रा, चन्द्रमा रूपी नाम की ठंडक और ज्ञान रूपी सूर्य के द्वारा पूर्णता की ओर बढ़ सकती है लेकिन ज्ञान समर्थ गुरू से मिलना है -

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥
अंग - 293

आवश्यकता है वर्तमान समय से शिक्षा लेकर अपने जीव भाव की अभेदता को गुरू के शब्द में लीन करके हमेशा के लिए अमर जीवन प्राप्त करें -

एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा॥
अंग - 795

बढ़ते हुए समय को बढ़ता हुआ न समझ कर इसे अपनी आयु व अपने मनुष्य जन्म के साथ तुलना करके देखना चाहिए क्योंकि समय तो बढ़ रहा है लेकिन हम तो घट रहे हैं -

जननी जानत सुतु बडा होतु है
इतना कु न जानै जि दिन दिन अवध घटतु है ॥
अंग - 91

दिन ते पहर पहर ते घरीआँ आव घटै तनु छीजै ॥
कालु अहेरी फिरै बधिक जिउ
कहहु कवन बिधि कीजै॥ अंग - 692

लेकिन पदार्थवाद युग के अन्दर इस सिद्धान्त की समझ का आ पाना, सहज व सरल नहीं है। समय ने बाहर की चमक-दमक को दिखाना है लेकिन नाम के रंग ने या गुरू ने आन्तरिक सच्चाई व लीलाओं को दिखाना है। यदि हमारा आन्तरिक रस शब्द के माध्यम से प्रकाशमान हो गया तो समझ लो कि समय सार्थक हो गया। समय का सफल होना और जीवन का सफल होना समरूप है, जिसने समय को सफल कर लिया, उसने अपने जीवन को भी सफल कर लिया होगा लेकिन इसकी पूर्णता की युक्ति, समर्थ सतगुरू श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी से ही मिलनी है -

सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की उतरै चिंद ॥ अंग - 295

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ अंग - 305

समय की सफलता, शरीर के सारे अंगों की सफलता है -

पाव सुहावे जाँ तउ धिरि जुलदे सीसु सुहावा चरणी॥
अंग - 964

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई ॥ अंग - 922

सतिगुर कै जनमे गवनु मिटाइआ ॥
अनहति राते इहु मनु लाइआ ॥ अंग - 940

सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईऐ ठाउ ॥
अंग - 517

समय उनकी यादें दिलाता है जो कि समय को सफल करके गए हैं, इसलिए उन्हीं की यादें मनाई जाती हैं। दूसरी तरफ जो समय को बरबाद करके गए हैं, उनकी यादें कभी भी मनाई नहीं जाती हैं। हाँ, उनकी बरबादी की दास्तानें अवश्य सुनाई जाती हैं। परमात्मा के प्यारे, समय के साथ-साथ सदा के लिए अमर हो जाते हैं -

नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुरु गोबिंदु ॥
अंग - 1429

बाबा फरीद के अन्तिम वचन 'अलहू अलकयूम' हे शाश्वत अल्लाह! तुम ही हमेशा रहने वाले हो। जो उसके

(शेष पृष्ठ 44 पर)

माघि सुचे से काढीअहि जिन पूरा गुरु मिहरवानु

(माघि माह की संक्रान्ति - 14 जनवरी, 2019 दिन सोमवार)

डा. जगजीत सिंह
मुख्य सम्पादक

राग तुखारी में प्राप्त गुरु नानक देव जी के बारहमाहा में से तथा राग माझ में उच्चारण किए गए बारहमाहा में से माघ महीने का पाठ तथा उसकी सरल व्याख्या -

माघि पुनीत भई तीरथु अंतरि जानिआ ॥
साजन सहजि मिले गुण गहि अंकि समानिआ ॥
प्रीतम गुण अंके सुणि प्रभ बंके तुधु भावा सरि नावा॥
गंग जमुन तह बेणी संगम सात समुंद समावा ॥
पुंन दान पूजा परमेसुर जुगि जुगि एको जाता ॥
नानक माघि महा रसु हरि जपि अठसठि तीरथ नाता ॥
अंग - 1109

पद अर्थ - माघि = माघ नक्षत्र वाली पूर्णमाशी का महीना। मजनु = डुबकी, दानु = नाम का दान, जनम करम मलु = कई जन्मों के किए गए कर्मों से पैदा हुई विकारों की मैल, गुमानु = अहंकार, कामि = काम में, करोधि = क्रोध में, मोहीअै = ठगे जाना, सुआन = कुत्ता, परवानि = स्वीकृत (धार्मिक कार्य), करि = करके, सुजानु = सयाना, कोढीअहि = कहे जाते हैं।

पौष के माह में ठंडक, पाला, कोहरा खूब पड़ता है, अत्यन्त तीव्र सर्दी पड़ती है और मनुष्य की काफी शक्ति सर्दी से बचने में ही खर्च हो जाती है लेकिन जो प्राणी नाम की गर्मी को अनुभव करते हैं, जिनके हृदय में गुरु-प्यार तथा मिलाप की लगन होती है, उनके मार्ग में वर्षा, पाला या आँधी कोई रुकावट नहीं बनती है, गुरु जी का फुरमान है -

झखड़ु झागी मीहु वरसै भी गुरू देखण जाई ॥ १३ ॥
समुंदु सागरू होवै बहु खारा
गुरसिखु लंघि गुर पहि जाई ॥ १४ ॥
जिउ प्राणी जल बिनु है मरता
तिउ सिखु गुर बिनु मरि जाई ॥ अंग - 757

माघ का महीना तीर्थों के स्नान के लिए बहुत ही शुभ व पावन माना जाता है। लोग प्रयाग आदि तीर्थों पर विशेष रूप से स्नान करने के लिए जाते हैं। श्री गुरु महाराज जी ने बाह्य रस्मों-रिवाजों तथा कर्मकाण्डीय रीतियों की जगह पर अपने मन के अन्दर की शुद्धता पर अधिक बल दिया है, सारी धार्मिक क्रियाएँ, परमेश्वर की प्रसन्नता लेने के लिए की जाती है। श्री गुरु जी 'जपु' वाणी में फुरमान करते हैं-

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी॥
जेती सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई ॥
अंग - 2

अर्थात तीर्थों पर जाकर मैं स्नान तभी करूँ यदि ऐसा करने से वह परमात्मा मेरे ऊपर प्रसन्न हो सके लेकिन यदि ऐसा करने से वह प्रसन्न नहीं होता है तो मैं तीर्थों पर जाकर क्या हासिल कर सकूँगा? अकाल पुरुष द्वारा उत्पन्न की हुई जितनी भी दुनिया को मैं देखता हूँ, इसमें परमात्मा की कृपा के बिना किसी को कुछ भी प्राप्त नहीं होता है और न ही कोई कुछ ले सकता है। जपुजी साहिब की इक्कीसवीं पउड़ी में आप जी समझाते हैं -

तीरथु तपु दइआ दतु दानु ॥
जे को पावै तिल का मानु ॥
सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ ॥
अंतरगति तीरथि मलि नाउ ॥ अंग - 4

अर्थात तीर्थ यात्रा, तीर्थ स्नान, तप साधना जीवों पर दया करनी, दिया हुआ दान, इन कर्मों के बदले में यदि किसी को कोई बड़ाई मिल भी जाए तो वह बहुत थोड़ी सी ही मिलती है लेकिन जिस मनुष्य ने अकालपुरुष के नाम में अपनी सुरति को जोड़ा है, जिसका मन नाम में पसीज गया है तथा जिसने अपने मन में अकालपुरुष के प्यार को बसाया हुआ है उस मनुष्य ने तो मानो अपने आन्तरिक तीर्थ में मल-मल कर स्नान कर लिया है तथा अपने अन्दर निवास कर रहे अकालपुरुष के साथ जुड़कर अपने मन की अच्छी तरह से मैल उतार कर उसे पूर्णरूपेण साफ कर लिया है।

इसी दृष्टि से गुरु जी माघ माह के आरम्भ में ही फुरमान करते हैं -

माघि पुनीत भई तीरथु अंतरि जानिआ॥
साजन सहजि मिले गुण गहि अंकि समानिआ॥
अंग - 1109

अर्थात माघ माह में जिस जीव ने अपने हृदय रूपी तीर्थ

की पहचान कर ली है तथा नाम के पावन अमृत सरोवर में स्नान कर लिया है, उसकी देह व जीवात्मा पूर्णत: पावन हो जाती है। दरअस्ल वास्तविक तीर्थ स्नान है परमात्मा के गुणों को अपने हृदय में बसाना तथा उसके चरणों में लीन हो जाना जिसके फलस्वरूप पूर्ण स्थिर व सहजावस्था प्राप्त होकर प्रभु सज्जन का मिलाप प्राप्त हो जाता है।

माघ के माह में बहुत सारे भारतवासी गंगा, यमुना व सरस्वती तथा जहाँ पर इन नदियों का मिलाप होता है, उस संगम पर स्नान करने को बहुत बड़ा पुण्य कर्म मानते हैं लेकिन गुरु जी उपदेश करते हैं कि हे मेरे सुन्दर प्रियतम! यदि तेरे गुणों को अपने हृदय में बसाकर, तेरा यशगान सुनकर, नाम-सिमरन करके मैं, तुम्हें अच्छा लगने लग पड़ूँ तो मानो मैंने अनेकों तीर्थों पर स्नान कर लिया है (प्रीतम गुण अंके सुणि प्रभु बंके तुधु भावा सरि नावा) अर्थात प्यारे प्रभु जी के चरणों में लीनता की अवस्था ही गंगा, यमुना व सरस्वती तीनों नदियों के मिलाप अर्थात त्रिवेणी या संगम की अवस्था है और वहीं पर मैं सातों समुद्रों को समाया हुआ मानता हूँ। (गंगा, जमुना तह बेणी संगम सात समुंद समाना) नाम जप-सिमरन के द्वारा, प्रभु-गुण गायन के द्वारा जो मनुष्य प्रभु जी के साथ प्यार डाल लेता है, प्रत्येक युग में व्यापक एक परमेश्वर को जान लेता है, मानो उसने सारे तीर्थों के स्नान तथा सारे पुण्य कर्म, दान व पूजा आदि कर लिए हैं। (पुंन दान पूजा परमेसुर जुगि जुगि एको जाता।।) यही नहीं बल्कि मानो उसने अड़सठ तीर्थों का महात्म्य भी प्राप्त कर लिया है। नानक माघी पदारसु हरि जपि अठसठि तीरथ नाता।। अत: वास्तविक तीर्थ स्नान तो नाम सरोवर में स्नान करना ही है। श्री गुरु नानक देव जी का फुरमान है-

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है॥
तीरथु सबद बीचारू अंतरि गिआनु है॥ *अंग - 687*

अर्थात मैं भी तीर्थ पर स्नान करने के लिए जाता हूँ लेकिन मेरे लिए परमात्मा का नाम ही बड़ा तीर्थ है। गुरू के शब्द को विचार-मण्डल में टिकाना ही मेरे लिए महान तीर्थ है क्योंकि इसकी बरकत से मेरे अन्दर परमात्मा के साथ गहरा सम्बन्ध जुड़ता है। सतगुरु द्वारा प्रदत्त यह ज्ञान मेरे लिए सदैव कायम रहने वाला तीर्थ स्थान है, यही मेरे लिए दस पावन दिवस (अमावस्या, संक्रान्ति, पूर्णमाशी, प्रकाश, रविवार, सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, दो अष्टमी तथा दो चौदष) है तथा यही मेरे लिए दसाहरा (दस पापों का हरण करने वाला दिन है एवं यही मेरे लिए गंगा का जन्म दिन है। इसलिए मैं तो प्रभु जी के नाम की ही याचना करता हूँ और सदैव यह प्रार्थना करता हूँ कि हे धरती के आधार प्रभु जी! मुझे अपना नाम प्रदान करो क्योंकि यह सारा संसार विकारों के अधीनस्थ रोगी हुआ पड़ा है और इनका सही उपचार केवल प्रभु जी का नाम ही है। सच्चे नाम के बिना मन के विकारों का अन्य कोई भी उपचार है ही नहीं और इसके अभाव में तो उल्टा मन को विकारों की मैल लग जाती है। गुरु का पावन शब्द मनुष्य को सदैव आत्मिक ज्ञान प्रदान करता है और यही शाश्वत तीर्थ है यही शाश्वत तीर्थ स्थान है।

रागु माझ बारहमाहा महला ५
माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु ॥
हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु ॥
जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ भाभी गुमानु ॥
कामि करोधि न मोहिऐ बिनसै लोभु सुआनु ॥
सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु ॥
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु ॥
जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु ॥
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु ॥
माघि सुचे से काँढीअहि जिन पूरा गुरू मिहरवानु ॥

अंग - *135*

माघ माह का पहला दिन अर्थात माघ नक्षत्र वाली पूर्णमाशी वाले महीने का प्रथम दिवस हिन्दू शास्त्रों के अनुसार अत्यन्त पावन माना जाता है। माघी के दिन हिन्दू सज्जन प्रयाग तीर्थ पर स्नान करने को अत्यन्त पुण्य कर्म समझते हैं। लेकिन गुरु जी बाह्य सारी क्रियाओं को निरर्थक कर्मकाण्ड मानते हैं क्योंकि कोई व्यक्ति जितना अधिक तीर्थों पर भ्रमण करता है, तीर्थ स्नान करता है, वह उतना ही अधिक अहंवादी प्रवृत्ति का धारणी बन जाता है और वह अन्य लोगों को अपनी तीर्थ यात्राओं के बारे में बताता फिरता है। गुरु जी का फुरमान है -

बहु तीरथ भविआ तेतो लविआ॥ *अंग - 467*

जितना भी कोई तीर्थों की यात्राएँ करता है, उतना ही जगह-जगह पर बताता घूमता है कि मैंने अमुक-अमुक स्थान की यात्रा कर ली है, फलस्वरूप तीर्थ यात्रा लाभकारी होने की जगह पर अहंकारी होने का कारण बन जाती है। इसीलिए इस महीने के माध्यम से गुरु जी उपदेश करते हैं कि हे प्राणी! तुम इस माह में तीर्थों पर स्नान करने की जगह पर गुरुमुखों व गुरु प्यारे साधुजनों की संगत करो, तुम्हारे लिए यही तीर्थों का स्नान है, मन में नम्रता लाओ और इस प्रकार से उनके चरण-रज का स्नान करो। (माघि मजनु संगि साधुआं धूड़ी करि इसनानु) उन गुरुमुख प्यारों की संगत में नाम जपो, परमात्मा का यशगान करो क्योंकि नाम-अभ्यासीजनों, गुरुमुखों, सन्त जनों व महापुरुषों की संगत में नाम सिमरन

अभ्यास वाला स्नान करने का बहुत बड़ा महात्म्य है। इस प्रकार की संगत बहुत बड़े भाग्यों के कारण ही प्राप्त हो पाती है।

संत का संग वडभागी पाईऐ॥

सन्तजनों व नाम अभ्यासी गुरुमुखजनों की संगत में घोर पापों का नाश हो जाता है।

महिमा साधू संग की सुनहु मेरे मीता॥
मैलु खोई कोटि अघ हरे निरमल भए चीता॥

अंग - 809

श्री गुरू अरजन देव जी का फुरमान है -

अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मनकी पूरे।
नानक दासु इहै सुखु माँगै
मो कउ करि संतन की धूरै॥ *अंग - 13*

तथा अन्य सबको भी यह नाम का अमूल्य उपहार बाँटो (हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु।।) श्री गुरु राम दास जी गुरसिक्ख की परिभाषा ही यह कथन करते हैं कि गुरसिक्ख, ब्रह्ममुहुर्त में उठकर नाम स्मरण करता है, स्वयं नाम जपता है तथा अन्य लोगों को नाम जपने के लिए प्रेरित करता है। रसना (जिह्वा) के द्वारा नाम का जप करना है तथा कानों के द्वारा वाहिगुरू-वाहिगुरू गुरमन्त्र को सुनना है। इस प्रकार से हमारा मन जुड़ने लगता है। गुरवाणी को भी ध्यानपूर्वक पढ़ना, कानों के द्वारा सुनना तथा उसे जीवन में धारण करना ही नाम जपना है। गुरवाणी का स्पष्ट उपदेश है कि स्वयं नाम का जप करना है तथा अन्य लोगों को नाम जपने के लिए प्ररित करना है। गुरुमुख स्वयं नाम जपता है तथा दूसरों को नाम जपने के लिए प्रेरित करता है। ऐसे गुरसिक्ख की चरण धूल को प्राप्त करने के लिए गुरु जी स्वयं लालायित रहते हैं अर्थात वे उनकी चरण रज को अत्यन्त सम्मान देते हैं -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
....
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ *अंग - 305*

ऐसा करने से यानि कि नाम स्मरण के द्वारा कई जन्मों में किए गए कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई विकारों की मैल तुम्हारे मन से उतर जाएगी और मन में से अहंकार दूर हो जाएगा। (जनम करम मलु उतरे मन ते जाइ गुमानु) जपुजी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी फुरमान करते है कि पानी के स्नान से केवल शरीर की ही मैल दूर होती है और कपड़ों की मैल उतारने के लिए साबुन का प्रयोग करना पड़ता है लेकिन यदि मनुष्य का मन व बुद्धि पापों के द्वारा मलिन हो जाए तो उन पापों की मैल अकालपुरुष के नाम स्मरण व नाम प्यार के माध्यम से ही साफ की जा सकती है -

भरीऐ हथु पैरू तनु देह ॥
पाणी धोतै उतरसु खेह ॥
मूत पलीती कपड़ु होइ ॥
दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ॥
भरीऐ मति पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥
पुंनी पापी आखणु नाहि ॥
करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥ *अंग - 4*

जब कोई भी अभ्यासी, जिज्ञासु या गुरू प्यारा साधक, किसी सन्त, साधू या नाम अभ्यासी की संगत में नाम-सिमरन में अपने ध्यान को जोड़ता है तो उसकी कई जन्मों से मन के ऊपर एकत्र हुई कर्मों की मैल उतर जाती है, नाम के अन्दर बस जाने से मन में हउमै व अहंकार का नाश हो जाता है क्योंकि जहाँ हउमै है, वहाँ पर नाम नहीं हो सकता है। हउमै तथा नाम दोनों एक स्थान पर नहीं बसते हैं, ऐसा गुरवाणी का विधान है -

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ॥

अंग - 560

नाम अभ्यासी, काम, क्रोध की मार से भी बचा रहता है, लोभ रूपी कुत्ता भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता है, आशा-तृष्णा के रोग उससे दूर ही रहते हैं। इस प्रकार की कृपा नाम अभ्यासी के ऊपर हो जाती है -

सबदि रते से निरमले तजि काम क्रोधु अहंकारु ॥
नामु सलाहनि सद सदा हरि राखहि उर धारि ॥

अंग - 58

गुरमुखि हरि जीउ सदा धिआवहु
जब लगु जीअ परान ॥
गुर सबदी मनु निरमलु होआ चूका मनि अभिमानु ॥

अंग - 1334

सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु ॥
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु ॥

अंग - 136

तीर्थों के स्नान से शरीर तो भले ही साफ हो जाए लेकिन मन के विकार दूर नहीं हो पाते हैं अर्थात काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार पूर्ववत् कायम रहते हैं लेकिन नाम-स्मरण की बरकत के द्वारा काम, क्रोध में नहीं फँसता है तथा लोभ के प्रभाव में मनुष्य कुत्ते की भांति दर-दर भटकता है, यह भटकन भी नाम-सिमरन के द्वारा समाप्त हो जाती है

(कामि करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु) प्रभु जी की शरण में जाने से नाम-सिमरन के अभ्यास के माध्यम से सारे विषय विकार नियन्त्रण में आ जाते हैं। गुरवाणी का फुरमान है -

काम क्रोध अरू लोभ मोह बिनसि जाइ अहंमेव ॥
नानक प्रभ सरणागती करि प्रसादु गुरदेव ॥

अंग - 269

नाम-स्मरण के सच्चे मार्ग पर चलने से सारा संसार उसकी स्तुति करता है। (सचे मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु)। नाम स्मरण करने वाले प्राणी को धार्मिक कर्मकण्डों व रस्मी क्रियाओं से भी छुटकारा मिल जाता है। अड़सठ तीर्थों के स्नान, सारे पुण्य कर्म, जीवों पर दया करनी आदि जो ऊंची धार्मिक क्रियाएँ मानी जाती हैं, ये सारी क्रियाएँ नाम-स्मरण में ही आ जाती हैं। (अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु) नाम स्मरण भी उसी की दात है लेकिन जिसके ऊपर उसकी कृपा हो जाती है, उसी को यह दात प्राप्त हो पाती है -

दाती साहिब संदीआ किआ चलै तिसु नालि॥

अंग - 83

इहु पिरम पिआला खसम का जै भावै तै देइ॥

अंग - 947

माया के मोह का मार्ग झूठ, पाखण्ड व फरेब का मार्ग है। धन जोड़ने की लालसा, पदवियाँ प्राप्त करने का लालच, जर, जोरू और जमीन सम्बन्धी लड़ाई-झगड़े, मनुष्य की सारी आयु इस झूठ की दुनिया में बरबाद हो जाती है।

सतगुरू से सच्चे, सत्य के मार्ग, परमात्मा के नाम मार्ग की समझ उत्पन्न होती है, जिस पर चलते हुए अपने निज-स्वरूप, परमात्म स्वरूप की पहचान होती है, परमात्मा की कृपा तथा मिलाप प्राप्त होता है तथा लोक व परलोक में सच्ची शोभा प्राप्त होती है। सासांरिक शोभा, झूठी, मतलबी व लालच से भरी होती है। मतलब पूरा न होने पर दोस्ती, दुश्मनी में बदल जाती है। सच्चा प्यार, प्रभु प्यार, नेक कमाई में बरकत होती है, मिल बाँट कर ग्रहण करने में प्रभु-प्रेम प्राप्त होता है और यह एक सच्ची क्रिया है। शेष सारे कर्म काण्ड, अड़सठ तीर्थों के स्नान, पापों की कमाई करके किए गए अनेकों दान इत्यादि करने से मन निर्मल नहीं होता है। नेक कमाई, महापुरुषों की संगत में जपा हुआ नाम तथा अन्य लोगों को नाम के साथ जोड़ने की प्रेरणा करनी ही सच्ची दया है जो कि प्रभु जी के दरबार में स्वीकार्य होती है -

जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु ॥
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु ॥

अंग - 136

परमात्मा अपनी कृपा करके जिस मनुष्य को नाम स्मरण की दात प्रदान कर देता है, उसी मनुष्य को वास्तविक अर्थों में सयाना कहा जा सकता है क्योंकि उसने जीवन के सही लक्ष्य व सही मार्ग की पहचान कर ली होती है (जिसनो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु) गुरु जी ऐसे गुरु-प्यारे, गुरसिक्खों, गुरुमुखों व हरिजनों से बलिहार जाते हैं, जिन्हें नाम स्मरण के द्वारा प्रभु जी का मिलाप प्राप्त हो जाता है। (जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबान) गुरु जी उपदेश करते हुए फुरमान करते हैं माघ माह में केवल उन्हीं प्राणियों को सुच्चे कहा जा सकता है, जिनके ऊपर पूरा सतगुरु दयावान होकर नाम-स्मरण की दात प्रदान करता है-

माघि सुचे से काढीअहि जिन पूरा गुरू मिहरवानु॥

अंग - 135

केवल सांसारिक ज्ञान हासिल करना ही वास्तविक सच्चा ज्ञान नहीं है। सांसारिक ज्ञान वाला ज्ञान अपनी दिमागी चालाकियों के माध्यम से संसार को ठगता है, कारों, कोठियों, जमीनों, जायदादों का मालिक बनकर शोहरत हासिल करता है तथा अपने आपको एक कामयाब इन्सान मानता है।

बाहर से झूठी शोभा होने के कारण वह माया में मस्त रहता है, लेकिन गुरू जी उसकी सच्चाई प्रकट करके बतलाते हैं -

पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई॥

अंग - 417

गुरू जी के अनुसार वास्तविक व सच्चा ज्ञान गुरू जी की कृपा के द्वारा ही प्राप्त होता है, जिसके द्वारा अपने वास्तविक स्वरूप की पहचान होती है -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥

अंग - 441

असली ज्ञान वान तो वही है जिसे परमात्मा ने अपनी कृपा के द्वारा सच्चा नाम प्रदान कर दिया है। साधु संगत में नाम अभ्यास के द्वारा की गई साधना को गुरू-कृपा का फल लगता है और प्रभु जी का मिलाप प्राप्त होता है। ऐसे गुरुमुख और नाम अभ्यासी जनों से गुरू जी कुरबान जाते हैं। माघ के महीने में वास्तविक रूप में सच्चे-सुच्चे व सयाने पुरुष वही हैं जो गुरू-कृपा के पात्र बनते हैं तथा प्रभु जी के नाम में अपने ध्यान को जोड़कर रखते हैं।

मुख्य सम्पादक
डा. जगजीत सिंह

श्री गुरू गोबिंद सिंह जी

(प्रकाशोत्सव 13 जनवरी, 2019 दिन रविवार)

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिगुर पुरख अगंमु है, निरवैरु निराला।
जाणहु धरती धरम की, सची धरमसाला।
जेहा बीजै सु लुणै फल करम समाला।
जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।
जेहा मुहु करि भालीऐ, तेहो वेखाला।
सेवक दरगह सुरखरू वेमुखु मुह काला।
भाई गुरदास जी, वार 34/1

साध संगत जी! चित्त वृत्तियां एकाग्र करो, गर्ज कर बोलो - सतनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए आप गुरू दरबार में पहुँचे हो। इस संसार में आज का दिन बहुत ही महत्वपूर्ण बताया जाता है क्योंकि इस दिन के आने की प्रतीक्षा में मनुष्य को हज़ारों साल इन्तज़ार करना पड़ा। संसार में जो महापुरुष हो चुके हैं उन सभी ने इस बात का अनुभव कर लिया था कि कुछ समय बीतने के बाद संसार पर एक ऐसी हस्ती का आना होगा जो संसार में एक ऐसा पंथ चलायेगी जो धर्म की रक्षा के लिये सदैव तत्पर रहेगा, सभी को प्यार करेगा और सब का सांझा होगा।

ईसा जी, 2000 साल पहले एक दिन इबादत से उठे, आपके नक्श बहुत गम्भीर हो गये थे। आपके साथी चेले पीटर्स ने पूछा, ''हज़रत साहिब! आप आज इतने गम्भीर क्यों हैं? कृपा करके यदि आपने कोई अलौकिक बात खुदा के दर पर देखी है तो हमें भी बताइये? क्योंकि ईसा जी ने जो बातें बाईबल में बताई हैं, वे ऐसी नहीं हैं जैसी गुरू नानक पातशाह ने वाणी उच्चारण की है। महाराज जी ने तो एक ही बार में कह दिया -

जैसी मै आवै खसम की बाणी
तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥ अंग - 722
हउ आपहु बोलि न जाणदा
मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ।। अंग - 763
धुर की बाणी आई।।
तिनि सगली चिंत मिटाई।। अंग - 628

ईसा जी बार-बार बताया करते थे कि आज हमें आसमानी फरिश्ते ने आकर यह बात कही है। उनकी सारी बाईबल में ऐसे ही लिखा मिलता है कि आज फरिश्ते ने यह बात कही, अमुक बात बताई आदि-आदि। इन सभी को समझने के लिये तोड़ना जोड़ना पड़ता है। अपने आप समझना पड़ता है कि कहाँ पर कौन सी बात कह रहे हैं?

मोहम्मद साहिब ध्यान धर कर बता दिया करते थे कि आज आसमान में जो लोह कलम, तख्ती के ऊपर रखी है, उस पर ऐसा लिखा हुआ था, इन्हें कहते हैं कि आयतें उतरती है या इहलाम आया है। ऋषि मुनियों को भी इहलाम आया करता था। वेदों की रचना, सारी ईश्वर द्वारा रची बताई जाती है। कोई ऋषि यह नहीं मानता कि मैंने उच्चारण की है। वे कहते हैं कि यह तो ब्रह्म द्वारा भेजी गई हैं। इहलाम का संकल्प हमारे अन्दर भी पैदा हुआ, जैसा कि मोहम्मद साहिब कह दिया करते थे कि आज लोह कलम पर ऐसा लिखा हुआ है। आसमान को एक तख्ती बताते थे। उस पर आयतें पढ़कर सुना दिया करते थे।

उस दिन जब पूछा कि महाराज आज आपने कोई अलौकिक चीज़ देखी है। ईसा जी ने कहा, ''हां! आज दरगाह से एक हस्ती प्रकट हुई जिसके चेहरे पर अति सुन्दर दाढ़ी है, नूरानी चेहरा है। बहुत ही सुन्दर मन को मोहित करने वाले सिर पर केश हैं, परन्तु वे ढके हुए हैं, खुले नहीं हैं और दस्तार (पगड़ी) बान्धी हुई है। उस पर श्रृंगार और सजावट ऐसी की गई है जैसे महाराजाओं के सिर पर की जाती है तथा कलगी लगी हुई है। वह मन मोहिनी सूरत घोड़ पर सवार है। कन्धे पर धनुष बाण लटक रहा है, पीछे सोने के तीरों का तरकश बान्धा है। सोने की चोंच वाले तीर हैं। उस पर खुदा की खास रहमत हो रही है। एक समय ऐसा आयेगा जब वह

संसार में प्रकट होंगे। परन्तु अभी समय काफी पड़ा है। समय की गणना करना बड़ा कठिन हुआ करता है। गुरू महाराज जी जब वचन किया करते थे, उस समय की गिनती करना बहुत कठिन हुआ करता था। आप कह दिया करते थे कि देखोगे, ऐसा समय आयेगा, धीरे-धीरे फिर वैसा ही हो जाता था। अंग्रेज बड़ा योग्य शासक था। जब सौ साखी रह गई तो इन्हें पता चल जाता कि अब ऐसा होने वाला है। क्योंकि सौ साखी में भविष्य की बात बताई जाती है।''

एक बेदी खानदान में से, आठ भाषाएं जानने वाला, लाहौर निवासी विद्वान हुआ। उसे लाखों रूपये देकर, बड़े सुन्दर मकान कोठियां देकर, अच्छी अच्छी सवारियां देकर उससे सौ साखियों के अर्थ समझाने के लिये कहा गया। उस समय जो सम्वत थी, वे अक्षरों में नहीं आये थे। जीरो (सिफर), एक दो गिनती अभी शुरू नहीं हुई थी। वे शब्दों में लिखे हुए थे। यदि चार लिखा आ जाता तो इसका अर्थ होता कि चार वेद आ गये और न ही वेद अक्षर लिखा होता था परन्तु इसका अर्थ चारों वेद ही हुआ करता था। इस तरह यदि अक्षर के साथ शून्य आ गया तो केवल सिफर (**zero**) बना हुआ है। इसका अर्थ होता है आकाश, भाव आकाश शून्य है। उसने सभी सम्व्त उलट पुलट कर दिये। जितनी भी घटनाएं घटित हुई थीं, आधे अक्षर किसी में से कम कर दिये, कहीं आधे अक्षर बढ़ा दिये। इस प्रकार उस सौ साखी का कोई महत्व न रहने दिया। इसके बाद इस काम के बदले इसे खूब धन दौलत मिली। लाखों रूपये, घोड़ा बग्गी वाली सवारियां, चार पाँच कोठियां आदि-आदि बहुत कुछ दिया गया। जीवन के अन्तिम दिनों में इसे अधरंग हो गया और पाप का फल मिला। जब अन्त समय पास आ गया, तो उस समय सियाने लोगों ने कहा कि सूरज डूब रहा है, अभी भी यदि यह प्रायश्चित कर लेता है और सही अर्थ बता देता है, सही सम्वत कौन सी किसके साथ आती है तो फिर हम कुछ कोशिश करके देख लेते हैं। गुरू महाराज जी के वचन कायम बने रहे। उस समय उसने कहा कि वह स्वयं ही सारा कुछ भूल चुका है। उसके पास कोई नकल तो है नहीं, इसलिये उसे कुछ भी याद नहीं कि क्या बिगाड़ा है? क्या उलटा लिखा गया है? मैंने पाँच सौ साखियां लिखी हैं। मैंने पाँचों की पाँचों तख्त को भेंट कर दी थीं। लेकिन ईसा जी का जो वचन है, वह कायम है जैसा उन्होंने कहा था कि जब 16वीं, 17वीं सदी आयेगी, उस समय जो रूह मैंने देखी है, वह प्रकट होगी, जो किसी के साथ जबरदस्ती नहीं करेगी, धोखा नहीं करेगी, जाहिल नहीं होगी, किसी के साथ अन्याय नहीं करेगी। एक महान हस्ती देवताओं जैसा चरित्र लेकर धरती पर अवतरित होगी।

अत: आज का दिन वही भाग्यशाली दिन है। दशमेश पिता जी आज के दिन ही संसार में अवतरित हुए। महापुरुषों का जन्म दिन नहीं हुआ करता, जन्म दिन तो हमारे जैसों का होता है। महापुरुषों का तो प्रकाश उत्सव हुआ करता है। आज के दिन ही एक प्रकाशमयी लौ भीखणशाह ने देखी, आज वह नमाज पश्चिम की ओर मुँह न करके, पूर्व की ओर मुँह करके पढ़ता है। बहुत ही दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति था। सरां से ऊपर था, नियमावली की परवाह नहीं करता था। आज पश्चिम की ओर खड़े होकर दुआ न की। पूर्व की ओर मुँह करके नमाज पढ़ी।

मुरीदों ने प्रार्थना की कि हज़रत! आपने आज सरां की मर्यादा भंग कर दी क्योंकि सरां के अनुसार नमाज़ मगरब (पश्चिम) की ओर मुँह करके पढ़ी जाती है और आपने मशरक (पूर्व) की ओर मुँह करके पढ़ी है क्या कारण है?

पीर ने कहा, ''आज एक महापुरुष संसार में अवतरित हुआ है। जब मैं समाधि में था, तब मैंने वह प्रकाश देखा।''

मुरीदों ने पूछा, ''हजूर! कहाँ पर अवतरित हुए हैं?''

पीर ने कहा, ''पटना नगर में।'' ऐसा अमुक स्थान है, जहाँ पर मैंने देखा। मैंने सभी कुछ पहचान लिया। इसलिये मुझे लगा कि अब तक जितने भी संसार में महापुरुष आए हैं, वे सभी उच्च कोटि की शिखर आत्माएं हैं। परन्तु यह तो संसार में बहुत बड़ा काम करने को आये हैं। उनके आने के स्वागत में मैंने नमाज इधर मुँह करके पढ़ी है। आज मशरक, मगरब में आ गया।

वैसे यदि लम्बी विचार करके देखें तो मगरब कह देने से कुछ नहीं होता। पहले तो मगरब मक्के में था, फिर वह आगे इंगलैंड में चला जाता है, उसके बाद और आगे कैनेडा में चला जाता है। अमेरिका में आ गया अर्थात दिशा बदलती चली जाती है। फिर जापान की ओर बढ़ गया। फिर वहाँ से सिंगापुर होता हुआ हिन्दुस्तान आ गया। ये कल्पना की हुई हैं, सीमाएं बान्धी हुई हैं, इधर पश्चिम है, इधर उत्तर है आदि-आदि। जितना मनुष्य को पता है, वह उतना ही बता सकता है। न तो सूरज कहीं छिपता है और न ही उदय होता

है। केवल धरती का हेर फेर है। धरती द्वारा चक्कर लगाने से कहीं अन्धेरा हो जाता है तो कहीं प्रकाश हो जाता है। आम लोगों के लिये सीमायें हुआ करती हैं।

वह बहुत ही सुलझा हुआ शरह के नियमों से ऊपर उठा हुआ योग्य पीर था। उसने गुरू जी की हस्ती को पहचान कर सिजदा किया और फिर स्वयं पटना गया। उसे पटना पहुँचते-पहुँचते दो तीन महीने लग गये थे। वहाँ पहुँच कर गुरू जी के दर्शन किये। मन शन्त हो गया। आज के दिन उस महान हस्ती ने जन्म लिया जिसे हम गुरू गोबिन्द सिंह जी, दुष्ट दमन के नाम से पुकारते हैं और आपके जो अमोलक सिद्धान्त हैं, उन्हें समझने का हमें यत्न करना चाहिये। प्रत्येक महापुरुष के जीवन में कुछ न कुछ ऐसी घटनायें होती हैं जो हमारी तरह शरीर धारण करके दिखाया करते हैं और वे हमारे लिये शिक्षादायी हुआ करती हैं।

गुरू दसवें पातशाह जी के कौतुक भी ऐसे ही निराले थे।

सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला।

भाई गुरदास जी, वार 34/1

दशमेश पिता जी संसार में वह महान हस्ती हुई हैं, जिन्हें आज तक समझा ही नहीं गया और न ही समझने के यत्न किये गये।

जब महापुरुष अवतार लेते हैं तो उस समय संसार का व्यवहार उल्लुओं जैसा होता है। उल्लू सूरज को नहीं देख सकता। इसी तरह दुनियां की आंखें तर्क से भरी होती हैं, उसे संसार नहीं मानता परन्तु जब शारीरिक जामा छोड़ देते हैं फिर उनके नाम के मेले लगते हैं, बड़ी-बड़ी गोष्ठियां करवाई जाती हैं, फिर प्रकट होते हैं। जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे नये आदर्श उनके जीवन के अनुभव होते हैं। सो, गुरू दशमेश पिता जी को समझा ही नहीं गया। कुछ हस्तियां जैसे बाबा बन्दा बहादुर जी हुए, इन्हें भी नहीं समझा गया। बाबा राम सिंह जी नामधारी इन्हें नहीं समझा गया। ऐसे ही बेकार का शोर मचाये जा रहे हैं। जैसा व्यक्ति आप होता है, उसे संसार भी वैसा ही दिखाई देता है। यदि कोई किसी सूरमा को देखे तो उसके मन में वैसा ही चित्र बन जाता है जैसे गुरू साहिब हर समय शस्त्रधारी बनकर कमान कन्धे पर रखा करते थे, तीर रखते थे, कृपाण रखते थे और हर समय युद्ध के लिये तैयार रहते थे। उनका यही दृश्य लोगों के मनों में घर कर गया। आप घोड़े पर विराजते बस वही मूर्ति लोगों के मन में समा गई। यदि किसी विद्वान ने उनको देखा तो उसे लगा कि गुरू साहिब जैसा विद्वान ही दुनियां में कोई नहीं है क्योंकि वह गुरू साहिब को हर समय चौकड़ी लगाये, लिखते हुए देखता है। महाराज जी ने इतना साहित्य लिखा जिसकी गिनती नहीं की जा सकती।

इस समय हमारे पास दशम ग्रन्थ बहुत ही छोटा सा रह गया है। कहते हैं नौ मन भारी ग्रन्थ लिखा हुआ था जिसका नाम विद्या धर ग्रन्थ था। 102 लेखकों के मध्य गुरू महाराज जी बिराजमान हुआ करते थे। उनके सामने 52 लेखक सामने बैठकर वार्ता लिखा करते थे। ग्रन्थों के ढेरों के ढेर गुरू जी के सामने रहते थे। ग्रन्थों का अनुवाद गुरू जी स्वंय छांट-छांट कर विद्वानों को दिया करते थे। जब मंगल कवि ने महाभारत के अठाहरवें अध्याय का अनुवाद किया तो महाराज जी ने मंगल कवि को इतना धन दिया कि 200 घुड़ सवार सिंह उसके घर छोड़ने जा रहे थे और रायपुर के पास से निकल रहे थे तो रायपुर की रानी ने समझा कि कोई दुश्मन माल लेकर भागा जा रहा है तो इन पर तोपों से फायर कर दिया। तब मंगल कवि ने सफेद झण्डा फहरा दिया। दूसरी ओर से घुड़सवार खबर लेने आया। उससे बातचीत हुई तब उन सभी को किले में बुलाया गया। कहते हैं, ''महारानी साहिबा! मैं कोई हमलावर घुड़सवार नहीं हूँ। मैं तो गुरू दसवें पातशाह के द्वार का वरोसाया हुआ एक विद्वान हूँ और उन्होंने मुझे एक पर्व लिखने की इतनी राशि इनाम स्वरूप दी है, मुझे इतना धन माल दिया है कि 200 घुड़सवार मेरे घर पर छोड़ने जा रहे हैं।''

इससे पता चलता है कि गुरू महाराज जी विद्या का कितना आदर करते थे। जिस समय गुरू महाराज जी ने राम अवतार प्रसंग लिखवाया, उस समय उसे दो लाख दीनार इनाम दिया था। स्वयं गुरू महाराज जी ने भी बहुत साहित्य लिखा है। कृष्ण अवतार, 2800 से भी अधिक शब्दों में लिखा, राम अवतार, देवियों के प्रसंग और अनेक ऐसे ग्रन्थ हैं जो अब लुप्त हो गये हैं, बेअन्त साहित्य लिखा था।

गुरू साहिब लेखकों को, तीर-अन्दाज़ नज़र नहीं आते थे, तलवारें चलाने वाले नज़र नहीं आते थे, उन्हें एक महान साहित्यकार नज़र आते थे। जब सुमति उपदेश देते थे तो गुरमत के भेद खोला करते थे। उस समय बड़े महान पुरूष, आत्मदर्शी, पूर्ण ज्ञानवान ब्रह्मज्ञानी दिखाई देते थे। ब्रह्मज्ञानियों को ब्रह्मज्ञानी ही नज़र आते हैं। कहीं भाई घनइया की पानी

पिलाने की सेवा से प्रसन्न होकर उसको घावों पर मरहम पट्टी लगाने के लिये दे रहे हैं और कहते, ''भाई घनईया! तूने वास्तव में सिखी के सिद्धान्त को समझा है।''

पीर बुद्धू शाह के साथ वचन करते समय आप एक महान दार्शनिक नज़र आते हैं। गुरू गोबिन्द सिंह जी का जीवन बहुपक्षीय है। आपने जो सिद्धान्त हमें दिया, वह स्वाभाविक था जो गुरबाणी पर आधारित है, क्योंकि किसी भी गुरू साहिबान का कोई भी वचन गुरू ग्रन्थ साहिब से बाहर नहीं है। इन्हीं वचनों के कारण ही हम गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पीछे लग गये। यदि आपके वचन गुरू ग्रन्थ साहिब से बाहर होते तो हमारे लिये दुविधा खड़ी हो जानी थी कि गुरू ग्रन्थ साहिब को मानें या गुरू दशमेश पिता जी के वचनों को मानें। मिलावटें या गलतफहमी पैदा हो सकती थी। परन्तु गुरू ग्रन्थ साहिब से बाहर जाने वाले सिद्धान्त मानने योग्य नहीं है, क्योंकि आपका ऐसा फ़रमान है -

जैसे एक आग ते कनूका कोट आग उठे,
निआरे निआरे होइ कै, फेरि आग मै मिलाहिंगे॥
जैसे एक धूर ते, अनेक धूर पूरत हैं,
धूरि के कनूका फेर धूरि ही समाहिंगे॥
जैसे एक नद ते, तरंग कोट उपजदत है
पान के तरंग, सबै पान ही कहाहिंगे॥
तैसे बिस्व रूप ते, अभूत भूत प्रगट होइ,
ताही ते उपज, सबै ताही मै समाहिंगे॥

(अकाल उसतति)

कतहूं सुचेत हुइकै, चेतना को चार कीओ,
कतहूं अचिंत हुइकै, सोवत अचेत हो॥
कतहूं भिखारी हुइकै, मांगत फिरत भीख,
कहूं महां दान हुइकै, मांगिओ धन देत हो॥
कहूं महाराजन को दीजत अनंत दान,
कहूं महाराजन ते छीन छित लेत हो॥
कहूं बेद रीत, कहूं ता सिउ बिप्रीत,
कहूं त्रिगुन अतीत, कहूं सुरगुन समेत हो॥

(अकाल उसतति)

जैसे एक आग ते कनूका कोट आग उठे, ...॥

अकाल उसतति

हजारों चिन्गारियां एक आग में से निकलती हैं। कहाँ जाना है? वही चिन्गारियां फिर उसी आग में समा जाती हैं। जैसे धूल उड़ती है तो आसमान में ऊपर उठ जाती है फिर धरती पर नहीं आती। समुद्र में करोड़ों तरंगें उठती हैं, वे कहाँ जाती हैं? सारी की सारी समुद्र में समा जाती है।

कतहूं सुचेत हूइकै, चेतना को चार कीओ,
कतहूं अचिंत हुइकै, सोवत अचेत हो॥

अकाल उसतति

ये सभी उसकी क्रियाएं हैं। कहीं सोया पड़ा है तो कहीं बहुत ही चेतन हुआ पड़ा है? कहीं महाराजों को दे रहा है तो कहीं उनसे छीन रहा है? सभी रूप उसी के हैं। कहीं वेद शास्त्रों को मानता है तो कहीं इसके विपरीत काम कर रहा है? महाराज जी कहते हैं कि यह सभी द्वैत के कार्य करता हुआ भी हमें अलग नहीं दिखाई देता। हे वाहिगुरू! आप भूत, भविष्यत तथा वर्तमान में तथा हर जगह एक जैसे लगते हो।

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं॥
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू॥ अंग - 1291

नाम काम बिहीन पेखत धाम हूं नहि जाहि।।
सरब मान सरबत्र मान सदैव मानत ताहि।।
एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक।।
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिर एक।।

अकाल उसतति

ऐसा जो गुरू है, जिसकी नज़र में दूसरा और कोई है ही नहीं, फिर उसके बारे में ना समझी की बातें लिखना कोई विद्वता नहीं है, जैसे बड़ा भारी दुश्मन है, कई लेखकों ने तो यहाँ तक लिख दिया कि गुरू दसवें पातशाह महाराज मुसलमानों के खिलाफ थे। महाराज जी कहते हैं कि हम किसी के खिलाफ नहीं हैं यदि मुसलमानों के खिलाफ होते तो गुरू नानक देव जी ने सारी जिन्दगी मरदाना को साथ रखा और जितने भी रागी थे वे सारे मुसलमान ही हुआ करते थे और वे गुरू दरबार में कीर्तन किया करते थे।

पांवटा साहिब में गुरू महाराज जी का अचानक युद्ध छिड़ गया और जो पठान सेवक रखे हुए थे वे धोखा दे गये। पहाड़ी राजाओं ने उन्हें रिश्वत देकर अपने साथ मिला लिया। सोचो जरा, उस समय कौन था जो उस संकट की घड़ी में महाराज जी का साथ देने आया? वह पीर बुद्धू शाह था जो 700 मुरीदों को साथ लेकर गुरू महाराज जी की मदद करने आया था। अपने दो पुत्रों, एक साले की इस युद्ध में कुर्बानी दी और जब गुरू साहिब प्रसन्न होकर कहते हैं, ''बुद्धू शाह! कुछ मांगना है तो मांग ले।'' पीर बोला, ''महाराज! मैं क्या मांगू'' जो आपने मुझे देना था, वह दे दिया। इससे आगे मैं और क्या मांग सकता हूँ? आपने तो आब-ए-हियात का जाम

मेरे पुत्रों को पिला दिया, मेरे मुरीदों को पिला दिया और उस बार-ए-गाह खुदा में उनको दाखिला दिला दिया। अब बताईये, मुझे इससे ज्यादा और कुछ मांगने की जरूरत है?'' गुरू महाराज जी ने कहा, ''नहीं, कुछ तो मांग। हमारा मन आज बहुत प्रसन्न है।'' तो पीर बुद्धू शाह ने कहा, ''यदि आप कुछ देना ही चाहते हैं तो जो इस कंघे में केश हैं या जो रोम टूट कर इसमें आ गये हैं, कृपा करके बस यही दे दीजिये। मेरे लिये तो ये केश ही तीन लोकों की दौलत समान हैं।'' साध संगत जी! उसके मन में पछतावा होता तो फिर वह ऐसे वचन न करता। वह तो बहुत खुश था कि उसके पुत्रों की कुर्बानी सही हो गई क्योंकि वह देख रहा था कि अधर्मियों ने धर्म का जो पौधा पनप रहा है, उसकी जड़ को नष्ट करने के लिये हमला कर दिया। महाराज जी कहते हैं-

फते साह कोपा तबि राजा।
लोह परा हम सो बिनु काजा। *बचित्र नाटक*

बिना किसी कारण के हमारे ऊपर हमला कर दिया। हम तो किसी को कुछ नहीं कहते हैं। हम तो प्रतिदिन यही प्रार्थना करते हैं -

नानक नाम चड़दी कला।
तेरे भाणे सरबत दा भला।

गुरू महाराज जी तो राजा का भी भला चाहते थे, बुरे लोगों का भी भला चाहते थे, अच्छों का भी भला चाहते हैं। राजा को गुरू महाराज जी के साथ युद्ध करने की क्या जल्दी थी जबकि गुरू महाराज जी ने उसकी लड़की को अपनी पुत्री समझ कर, लड़की के विवाह पर तीन लाख का तम्बोल भेजा था जो आजकल के तीन करोड़ के बराबर है। अनेक प्रकार के तोहफे भेजे और वह बिना किसी कारण के, हम पर फौजें लाकर हमला करता है। हमला करते समय मुकाबला करने के लिये ही तरीके हुआ करते हैं। एक तो यह होता है कि चौकड़ी लगाकर बैठ जाओ और अपना गला कटवा लो। ऐसा करने से जो शत्रु होता है वह आगे बढ़ता है क्योंकि वह कसाई बन जाता है और समझता है कि वह मुझ से डर गया है। दूसरी बात होती है कि मर्दानगी के साथ मुकाबला करना। अपनी कुर्बानी देना और जुल्मों को रोकना। जालिम के हृदय में भय पैदा कर देना। उसके मन में यह बात बैठ जाना कि वह मुझसे ज्यादा ताकतवर है। मेरा इससे मुकाबला करना ठीक नहीं। यदि हलकाए हुए कुत्ते काटने लग जाये तो फिर कोई न कोई बन्दोबस्त करना ही पड़ता है। अपना बचाव करना ही पड़ता है क्योंकि उन्होंने तो काटना ही है और हमने घायल हो जाना है फिर हम भी हलकाए ही बन जायेंगे। यदि कुत्ते को मार दिया जाये तो न केवल हमारा ही बचाव होगा बल्कि और भी बच जायेंगे। संसार में गुरू साहिब के युद्धों के बारे में अजीब-अजीब सवाल हैं।

परन्तु गुरू महाराज जी ने कहीं भी किसी की एक इंच जमीन पर भी कब्जा नहीं किया। यदि चाहते तो जब 22 धार के पहाड़ी राजाओं को हार दी थी, उस समय उनकी राजधानियों पर कब्जा कर लेते और उनके हाथ खूब धन दौलत आती और फौजें भी बढ़ जानी थी। पहाड़ों का सहारा भी मिल जाना था बारह-तेरह लड़ाईयों में पहाड़ी राजा हारते रहे। यदि आप चाहते तो उनकी जमीन जायदाद पर कब्जा कर लेते और उन्हें उठने भी न देते। परन्तु आपने ऐसा नहीं किया। आपका उद्देश्य लड़ाई करना नहीं था। संसार में खूब अधर्म मचा हुआ था। जब अकालपुरुष ने संसार में भेजा था तो उसने स्पष्ट कर दिया था कि तुमने संसार में जाकर क्या क्या करना है? उसके बारे में संकेत दे देते हैं कि मैंने संसार में आज तक जितने भेजे हैं उन सभी ने अपनी पूजा करवाई और स्वंय ही आगे आ गये और मैं जो परिपूर्ण संसार का परमेश्वर हूँ, जिसने सब कुछ पैदा किया है, उसे किसी ने भी दृढ़ नहीं करवाया बल्कि अपनी पूजा करवाने लगे। स्वयं ही परमेश्वर बन गये, किसी को भी मेरे पीछे न लगाया।

जे कोई होत भइओ जग सिआणा
तिन तिन अपनो पंथ चलाना।
परम पुरख किनहूं न पाइओ
वैर वाद हंकार बडाइओ।

आपस में एकता पैदा न की बल्कि वैर बढ़ा दिया। जितनी भी सम्प्रदायें चलीं, वे सभी आपस में लड़ पड़ीं, जितने पंथ चले, वे सभी आपस में लड़ते रहे, एक दूसरे को मारने के लिए धर्म की ओट लेते रहे। एक दूसरे का खून बहाकर कहते कि हम तो धर्म का काम कर रहे हैं।

अपने ही पत्तों से वृक्ष जलने लग गया। परमेश्वर के बताये रास्ते पर कोई न चलता। कोई पर्वतों को सिर झुकाता, कोई वृक्षों को पूजता, कोई सर्प को देवता मान कर शीश झुकाता, कोई माता की पूजा करता, कोई सूरज को सिर नवाता, कोई चन्द्रमा को सत-श्री-अकाल कहकर निवाजता, कोई तारों को शीश झुकाता, कोई धर्म राज की पूजा करता, कोई किसी देवता की पूजा करता। एक प्रकार

से अन्धेर छा गया था। परमेश्वर को तो एक तरफ छोड़ दिया गया।

जिनि जिनि तनकि सिध को पायो।
तिन तिनि अपना राहु चलायो। बचित्र नाटक

एक सरवरिया पीर था जिन्हें सुलताना कहते हैं। उसका नाम अहमद था। इसने खूब तप किया तो उसे कुछ सिद्धि सी प्राप्त हो गई। सारे पंजाब को अपने पीछे लगा लिया। कब्र की पूजा करवानी शुरू कर दी। परमेश्वर तो भूल ही गया। इसी तरह गोरख नाथ जैसे नाथों के पास सिद्धियां आ गईं। वे अपनी पूजा करवाने लग गये।

परमेसर न किनहूं पहिचाना। बचित्र नाटक

घट-घट में व्याप्त जो परमेश्वर था, उसे किसी ने न पहचाना।

मम उचारते भयो दिवाना। बचित्र नाटक

अपने आप ही उलझ गये। अपने-अपने धर्म बना लिये, नये-नये पंथ चल पड़े। परमेश्वर ने आप जी से कहा कि तुम संसार में मेरा यह सन्देश लेकर जाओ -

मै अपना सुत तोहि निवाजा।
पंथ प्रचुर करबे कउ साजा।
जहा तहा तै धरमु चलाइ।
कबुधि करन ते लोक हटाइ॥

अकाल पुरख बाच (चौपई)

ये जो धरती पर कुमार्गगामी बन गये हैं, इन्होंने यह पहचान नहीं करवाई की पारब्रह्म परमेश्वर घट-घट वासी है, हर एक के हृदय में बसता है। इन्होंने इस बात की पहचान न कराने के कारण सभी बाहर-बाहर ही निकाल दिये। महाराज जी कहते हैं कि वह तो सभी के अन्दर रहता है। इस तरह से फ़रमान करते हैं - पढ़ो प्यार से -

धन पिर का इक ही संगि वासा
विचि हउमै भीति करारी॥ अंग - 1263

महाराज जी कहते हैं, प्यारे! तू भी वहीं रहता है, परमेश्वर भी वहीं रहता है। हउमै की दीवार बीच में होने के कारण एक दूसरे से तुम मिला नहीं पाते।

हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ॥
भांभीरी के पात परदो बिनु पेखे दूराइओ॥ अंग - 634

गुरि पूरै हउमै भीति तोरी जन नानक मिले बनवारी॥
अंग - 1263

जब पूरा गुरू मिल जाता है, वह पूरा शबद दे देता है तब शबद के साथ हउमैं की दीवार टूट जाती है -

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै॥
बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै॥
अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै॥
तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै॥
सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई॥
अंग - 954

पारब्रह्म परमेश्वर कहने लगे कि मुझे किसी ने नहीं पहचाना। मैं हर एक के अन्दर वास करता हूँ और जितने मैंने पहले भेजे उन्होंने मेरा ज्ञान किसी को नहीं दिया और अपना-अपना बजूद आगे ले आये। अपने ही नये कार्यक्रम बता दिये। शक्ल से बेशक्ल बना दी। किसी ने अपने सिर के सारे ही केश मुंडवा दिये, किसी ने लम्बी-लम्बी जटाएं रख लीं। किसी ने अंगूठियां पहन लीं, किसी ने नई मुद्रा बना ली। इस प्रकार सभी ने कुछ न कुछ नया रूप धारण कर लिया। असली चीज़ को तोड़-फोड़ दिया। मेरा ज्ञान तो दिया नहीं अपना ही ज्ञान देने लग गये।

जे कोई होत भइओ जग सिआणा
तिन तिन अपनो पंथ चलाना।

अकालपुरूष ने गुरू महाराज जी से कहा कि आप संसार में जाओ और मेरा सन्देशा दो कि मैं किसी से दूर नहीं हूँ, सभी के अन्दर रहता हूँ।

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि॥
असिथरु थानु सदा निरमाइलु आपे आपु उपाइदा॥
अंग - 1033

प्रत्येक शरीर में मैंने अपनी निर्मल जगह बनाई हुई है।

अंदरि कोट छजे हटनाले॥
आपे लेवै वसतु समाले॥
बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै गुर सबदी खोलाइदा॥
अंग - 1033

जब तक समरथ गुरू से शबद की प्राप्ति नहीं होती, तब तक वह मुझ तक नहीं पहुँच सकता क्योंकि वज्र कपाट लगे हुए हैं और मैंने उनकी चाबी गुरू को दी हुई है।

जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई॥
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई॥
अंग - 205

इन्हें जाकर बताओ कि मैंने अपने दर की चाबी सतगुरू को दी हुई है। सारा संसार दुखी हो रहा है, मैं दूर नहीं हूँ, मैं

सबके घरों में रहता हूँ। मेरे ज्ञान के बिना सभी के मनों में अन्धकार रहेगा। आपस में लड़ेंगे और दुखी होंगे।

बिनु सबदै अंतरि आनेरा॥
न वसतु लहै न चूकै फेरा॥
सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुल्है नाही
गुरु पूरै भागि मिलावणिआ॥ *अंग - 124*

यदि पूरे भाग्य जाग जाये तो सतगुरू मिलता है। इस प्रकार सतगुरू जी को कलयुग में भेजा गया। अकालपुरुष का हुक्म है, ''हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तू गुरू परमेश्वर। यह जो मेरा स्वरूप है, वह तुझे बताता हूँ। तुम संसार को समझाओ कि मैं कल्पित चित्रों के अन्दर नहीं हूँ, मेरा कोई रूप नहीं हैं, रंग नहीं है। भेष नहीं है -

चक्र चिहन अरु बरन जाति अरु पाति नहिन जिह॥
जाप साहिब

मेरा कोई चक्र चिन्ह नहीं। मेरी कोई विशेष बोली नहीं, मैं दुनियां की हर चीज़ में समाया हुआ हूँ।

नही जान जाई कछू रूप रेखं॥
कहा बास तांको फिरै कउन भेखं॥
कहा नाम ताको तहा कै कहावै॥
कहा मै बखानो कहे मो न आवै॥ *अकाल उसतति*

इस जीव का जो स्वरूप है, मैं उसके अन्दर बसता हूं, वही मेरा स्वरूप है। मुझ से दुनियां भटक गई है जिसके फलस्वरूप अन्धकार में पड़ी है। इनके अन्दर कुबुद्धि घर कर गई है। इन्हें यही बताना है कि मैं तो तुम्हारे अन्दर ही रहता हूँ। वज्र कपाट की चाबी गुरू से लेकर खोल लो।

भीतरि कोट गुफा घर जाई॥
नउ घर थापे हुकमि रजाई॥
दसवै पुरखु अलԽखु अपारी आपे अलखु लखाइदा॥
अंग - 1033

मैं तो सभी के अन्दर बैठा हूँ। दुनियां को जाकर समझाओ कि मुझे कहीं दूर मत ढूंढो।

फरीदा जंगलु जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोड़ेहि॥
वसी रबु हिआलीऐ जंगलु किआ ढूढेहि॥
अंग - 1379

इस प्रकार अकालपुरूष ने वचन किये और फरमान किया -

मै अपना सुत तुहि निवाजा।
पंथ प्रचुर करबे कउ साजा।

जाओ, इस धर्म के रास्ते को, दुनियां को बताओ, मैं तुम्हें पुत्र की पदवी देता हूँ।

जहां तहा तै धरमु चलाइ।
कबुधि करन ते लोक हटाइ।

धर्म की रीत कायम करो क्योंकि संसार के अन्दर से धर्म खत्म हो गया और ही नये धर्म बन गये हैं, और ही नई रीतियां बन गई हैं। धर्म की बात तो समाप्त होती जा रही है। हर तरफ अधर्म ही अधर्म फैलता जा रहा है। गुरू नानक पातशाह जी फरमान करते हैं -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ॥
अंग - 145

धर्म ता पंख लगाकर संसार से उड़ गया है।

कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नीह कह चड़िआ॥
अंग - 145

संसार से धर्म का चन्द्रमा लुप्त हो गया।

हउ भालि विकुंनी होई।।
आधेरै राहु न कोई।। *अंग - 145*

संसार इसलिए दुखी है कि अन्धेरे में इसे कोई रास्ता नहीं दिखाई देता। मनुष्य पैदा होता है, मर जाता है। अन्दर हउमैं होने के कारण शान्ति नहीं आती। मनुष्य सही मार्ग से भटक गया है। अकाल पुरूष कहते हैं कि जाओ, इन लोगों को धर्म के रास्ते पर लगाओ। जो दुर्बुद्धि लोगों के मन -

हउ भालि विकुंनी होई॥
आधेरै राहु न कोई॥ *अंग - 145*

में घर कर गई है। इसे लोगों को वर्जित करो।

मैं अपना सुत तुहि निवाजा।
पंथ प्रचुर करबे कउ साजा।
जहा तहा तै धरमु चलाइ।
कबुधि करन ते लोक हटाइ॥ *चौपई*

पातशाह स्वयं लिखते हैं कि यह सारा संसार तो उलट राहों पर चल रहा है। यह तो एक बाढ़ सी आई हुई है जिसे किसी भी तरीके से नहीं रोका जा सकता। इस प्रकार के अन्धकार से भरे विचारों की बाढ़ को कैसे रोका जायेगा? महाराज जी कहते हैं यह देख कर हम अकालपुरुष के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये।

ठाढ भयो मै जोरि कर,
बचन कहा सिर निआइ॥ *चौपई*

हम दोनों हाथ जोड़कर सामने खड़े हो गये। शीश नंवाया और

वचन किया -

पंथ चलै तब जगत मै, जब तुम करहु सहाइ॥ चौपई

हे प्रभु! जो तुम्हें मिलने का रास्ता है, दुनियां इस रास्ते पर तभी आयेगी यदि आप मेरी सहायता करोगे। आपने विनम्रता सहित बेनती की कि आपने संसार में आकर बताया कि मैं क्यों आया हूँ? मैं कोई राज पाट लेने नहीं आया, न ही मैं कोई पाखण्ड रचाने आया हूँ, न किसी का सिर मुंडवाने के लिये आया हूँ, न ही टोपियां पहनवाने आया हूँ, न ही मैंने कोई तुम्हारी रूप रेखा बदलनी है? जैसा मनुष्य पैदा हुआ है, स्वाभाविक ही रहेगा, उसमें कोई परिवर्तन नहीं करना। मैं इस काम के लिये आया हूँ।

हम इह काज जगत मो आए।
धरम हेत गुरदेव पठाए।
जहां तहां तुम धरम बिथारो।
दुसट दोखीअनि पकरि पछारो॥ चौपई

दूसरी बात यह है कि यदि कोई दुष्टता दिखायेगा, उसकी दुष्टता दूर करनी पड़ेगी। जो दोषी हैं, उनके अवगुण दूर करने हैं। उन्हें भी ठीक करना है। अतः भाइयो, कहीं धोखा मत खा जाना। असली बात को भूलकर, मुझे ही पारब्रह्म परमेश्वर मत कहने लग जाना। ऐसा काम मत करना। इस तरह से फ़रमान करते हैं -

जो हम को परमेसर उचरि हैं।
ते सभ नरक कुंड महि परि हैं।
मो को दास तवन का जानो।
या मै भेद न रंच पछानो।
मै हो परम पुरख को दासा।
देखन आयो जगत तमासा।
जो प्रभ जगति कहा सो कहि हों।
म्रित लोक ते मोन न रहि हों। चौपई।

कहने लगे, दो बातों का ध्यान रखना। एक तो यह कि मैं परमेश्वर नहीं हूँ। जो मुझे परमेश्वर कहेगा उसे परमात्मा नहीं मिलेगा। वह नरकों में जायेगा क्योंकि वह झूठ बोलता है। बेशक परमेश्वर और साधुओं में कोई अन्तर नहीं होता, लेकिन परमेश्वर बहुत बड़ा है, उसका कोई पारावार नहीं है। गिलास में रखे पानी तथा समुद्र के पानी में तत्व रूप से कोई अन्तर नहीं होता लेकिन मात्रा में अन्तर होता है? यदि हम गिलास के पानी को कहें कि यह समुद्र है, तो वह समुद्र नहीं हो सकता। इसलिये उस पर समुद्र की उपाधि घटित नहीं होती। वह तो गिलास का ही पानी है, इसी तरह बालटी का पानी, हौज़ का पानी, गड्ढे के पानी की अपनी एक सीमा होती है। झील के पानी की अपनी सीमा है। समुद्र की अपनी सीमा है। लेकिन झील और समुद्र के पानी में भी मात्रा के कारण अन्तर हुआ करता है। महाराज जी कहते हैं-

जिना न विसरै नामु से किनेहिआ॥
भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ॥ अंग - 397

वे तो सांई का अंग होते हैं लेकिन यदि उन्हें परमेश्वर कहें तो बात गलत हो जाती है क्योंकि परमेश्वर को किसी सीमा में नहीं बान्धा जा सकता। वह तो बेअन्त है, उसे अन्त में कैसे लाया जा सकता है। जब हम किसी को परमेश्वर कहेंगे तो उसके शरीर को देखकर कहेंगे क्योंकि हमें ज्ञान तो है नहीं, हमारे अन्दर आत्मदृष्टि है नहीं। ब्रह्मदृष्टि न होने के कारण हमने शरीर को ही परमेश्वर कहा। इस बात से महाराज जी ने मना कर दिया। देखो, हमारे इस शरीर को परमेश्वर मत कहना। जो इस सिद्धान्त पर चलेगा, उसे रास्ता ही नहीं मिलेगा।

मो को दास तवन का जनो।
या मै भेद न रंच पठानो। चौपई

मै हो परम पुरख को दासा।
देखन आयो जगत तमासा। चौपई

मैं इस संसार में फंसने के लिये नहीं आया। मैं एक खेल खेलने आया हूँ। इस संसार के तमाशे को देखने आया हूँ।

जो प्रभ जगति कहा सो कहि हों॥
म्रित लोक ते मोन न रहि हों॥ चौपई

मुझे जो आदेश दिये हैं, वही मैंने बताने हैं।

मैंने चुप नहीं रहना। मौन रहना मेरा काम नहीं है, मैंने बोलकर बताना है। ऐसे हैं गुरू दशमेश पिता जी जिनके बारे में हमने विचार किया है। साध संगत जी! इस तरह का उनका स्वभाव था, ऐसे काम करने आये थे। बहुपक्षीय जीवन होने के कारण इन्हें समझा, पहचाना नहीं गया। एक महान जरनैल उन्हें जरनैल कहता है, बड़ा योद्धा उन्हें महान योद्धा समझता है। लेखक उन्हें लेखकों का शिरोमणि मानता है। एक महान वर्ग उन्हें कवियों का सिरमौर कहता है। अपना अपना मत, अपने अपने दृष्टिकोण से गुरू साहिब की बहुपक्षीय हस्ती को देखकर, मनुष्य समझ न सका कि गुरू दशमेश पिता जी कौन थे? साध संगत जी! हमें जितना समझ में आता है, थोड़ा-थोड़ा समझने की कोशिश करनी है।

गुरू महाराज जी केवल प्यार की मूरत थे। उनका किसी के साथ वैर नहीं था, किसी को भय नहीं दिखाते थे। इसलिये स्वयं भी किसी से डरते नहीं थे।

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि॥
अंग - 1427

आप सभी को प्यार करते थे। छोटे से छोटे बच्चे ले लेकर बड़ी से बड़ी हस्ती से प्यार करते थे। जिनका संसार में कोई नहीं, ऐसे लोगों को भी आप प्यार किया करते थे।

जिन दिनों गुरू महाराज जी मालवा गये तो उन दिनों भाई डल्ले के पास ठहरे हुए हैं। वहाँ पर भाई भगतू के वंश में से, भाई जीवन के पुत्र दर्शन करने आये। फतह सिंह, राम सिंह, तख्त सिंह, त्रिलोक सिंह चार भाई थे और ये दो माताओं की गोद से उत्पन्न हुए थे। महाराज जी ने कहा कि हमने तुम्हारे गाँव चलना है। महाराज जी ने वैसे कभी भी किसी के घर या गाँव जाने के लिये नहीं कहा था। वे बड़े हैरान हुए और कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! यह मालवा भी कोई रहने की जगह है। यहाँ पर तो इतनी गर्मी पड़ती है, चारों ओर रेत के टीले हैं, हर समय रेत उड़ती रहती है। हम तो घरों में खाना भी अच्छी तरह से नहीं बना पाते। सारे दरवाजे बन्द करके, झरोखों में खूब कपड़े ठूंस देते हैं। छत के मोगे भी बन्द कर देते हैं। हे सच्चे पातशाह! कभी बड़ी मुश्किल से रोटी खा पाते हैं, इतनी धूल अन्दर आ जाती है। सच्चे पातशाह! गर्मी इतनी अधिक है कि सहन करना बड़ा कठिन हो जाता है। महाराज जी! यह जगह बहुत अच्छी है, जहाँ आपने निवास किया हुआ है।'' इस तरह उसने जवाब दे दिया। परन्तु महाराज जी ने कहा, ''भाई फतह सिंह! हमने तो तेरे गाँव जरूर जाना है।'' उसे यह मालूम नहीं था कि महाराज जी क्यों बार-बार चलने के लिये कह रहे हैं। महाराज जी ने कहा, ''जाओ, तैयारी करो।'' सो भठिन्डे से आपने तैयारी करवा दी। उन्होंने जाकर एक वृक्ष को काट कर उसके चारों ओर बहुत सघन छायां कर दी। चारों ओर सरकण्डे लगा दिये ताकि रेता अन्दर न आये। आस पास इतना पानी छिड़कवा दिया कि रेता पूरी तरह से दब गया। जगह ऐसी बन गई जैसे वातानुकूलित (**air conditioned**) हो। वहाँ पर जब महाराज जी ने विश्राम किया तो कहने लगे, ''प्रेमियो! तुम तो कहते थे कि यहाँ पर तो आग बरसती है पर यहाँ तो पांवटा साहिब जैसा नज़ारा बना हुआ है। तुमने यह जो झौंपड़ी बनाई है, हमें तो यह बहुत प्यारी लगती है।''

इस तरह दो दिन बीतने के बाद महाराज जी ने कहा, ''फतह सिंह! आज भोजन हम तुम्हारे घर करेंगे।'' महाराज जी घोड़े पर सवार हो गये। फतह सिंह और राम सिंह घोड़े के आगे आगे चल रहे हैं। महाराज जी को बड़े आदर के साथ घर ले जा रहे हैं। थोड़ी दूर जाकर महाराज जी एक दम घोड़े से उतर गये और उन्होंने पीछे मुड़कर देखा और बोले, ''सच्चे पातशाह! हमारा घर तो अभी आगे है। आप यहीं रूक गये?'' गुरू महाराज जी एक गरीब के घर के सामने खड़े हैं और कह रहे हैं कि क्या यह घर नहीं है? वहाँ पर सभी के कच्चे घर थे। महाराज जी उस गरीब के घर में प्रवेश करते हैं। दरवाजे की ओट में एक महिला खड़ी है। कन्धे पर खेस (चादर) रखा हुआ है, हाथ जोड़कर खड़ी है, नेत्रों से प्रेम आंसू छलक रहे हैं। कहती है, ''सच्चे पातशाह! मैं एक गरीबनी हूँ मेरा इस दुनियां में कोई नहीं है। आप बड़े-बड़े लोगों के घर आए हैं, मेरा घर भी पवित्र कर दो।'' उधर फतह सिंह कहता है, ''महाराज जी! अपना घर तो अभी आगे है।'' महाराज जी कहते हैं, ''ठहरो! महाराज जी ने उस महिला के सिर पर हाथ रखा, प्यार किया। कहने लगे, ''बीबी! क्या चाहती है?'' महिला बोली, ''महाराज जी! मेरे घर भी भोजन करो।'' महाराज जी ने कहा, ''हम तेरे घर कल आयेंगे और भोजन तैयार रखना। हम कल भोजन यहाँ करेंगे।'' वह बोली, ''महाराज जी! मैंने आपके लिए एक विशेष भेंट बनाई है। एक-एक तार पर तेरा नाम लिखा है और जपा है। तेरे ध्यान में बैठ कर यह भेंट बनाई है जिसे मैं आपको उपहार में देना चाहती हूँ।'' महाराज जी कहते हैं, ''यह खेस भी हम कल ही ले जायेंगे।'' महाराज जी इतना कह कर आगे चल पड़े। जब फतह सिंह के घर के सामने आकर रूके तो पूछा, ''हमारा विश्राम स्थान कहाँ बनाया है?'' वे बोले, ''महाराज जी! आप चौबारे पर विश्राम करें।'' साथ वाला जो मकान था वह तखत सिंह का था। उनके घर लेकर नहीं गये क्योंकि वह उनका शरीक था। गावों में इन शरीकों का होना बहुत बुरी बात हुआ करती है। ईर्ष्या बहुत ज्यादा होती है। ये दोनों सौतेली मां के पुत्र थे। इन्होंने महाराज जी को उधर नहीं जाने दिया। महाराज जी को लकड़ी की सीढ़ी द्वारा अपने चौबारे पर चढ़ा दिया गया। महाराज जी की जब नज़र उधर पड़ी और देखा कि साथ वाले मकान में तो कच्ची सीढ़ी बनी है। महाराज जी ने कहा, ''राम सिंह! तुम्हारे अन्दर इतनी ईर्ष्या

क्यों है? देख तेरे भाइयों के घर तो कच्ची सीढ़ियां बनी हुई हैं और तुमने गुरूओं, पीरों को इतनी कठिन जगह से पार कराया है, हमें लकड़ी की सीढ़ी पर से क्यों चढ़ाया है?'' इतना कहकर महाराज जी ने रात वहीं बिताई और दूसरे दिन दूसरी ओर आंगन में उतर गये। बीच में एक दीवार थी। महाराज जी ने वह दीवार तोड़ दी। सारे इक्टठे हो गये। कहने लगे, ''महाराज जी! भोजन तैयार है।'' गुरू महाराज ने कहा, ''पहले तुम आपस में ईर्ष्या करनी छोड़ो। हम तुम्हारे घर तभी भोजन करेंगे जब तुम्हारे अन्दर कोई वैर नहीं रहेगा। हम तो तुम्हें आपस में मिलाने आये हैं न कि तोड़ने आए हैं।''

महाराज जी ने भाईयों का आपस में मेल करवाया और आगे चल पड़े। दूसरी तरफ की दीवार का एक दरवाजा बन्द किया हुआ था। महाराज जी ने ज़ोर से ठोकर मारी और सारी ईंटें गिर गईं। फिर महाराज जी ने कहा, ''हमारे पीछे-पीछे आ जाओ।'' कहते हैं, ''आगे किसका घर है?'' जवाब मिला, ''महाराज! माई देसा का घर है और माई भोजन तैयार करके बैठी है।'' एक चौकी पर खेस रखा हुआ है और महाराज जी की इन्तज़ार कर रही है। अन्दर ही अन्दर मन से महाराज जी को भोजन खिला रही है। महाराज जी उस कच्ची झौंपड़ी में जाकर अन्दर रखी चौकी पर बैठ गये। जो भोजन तैयार करके रखा हुआ था, महाराज जी ने खाना शुरू कर दिया। माई देसा को कुछ पता नहीं चला क्योंकि वह तो महाराज जी के ध्यान में बैठी थी। जब महाराज जी ने भोजन कर लिया और बोले, ''बीबी! पानी तो पिला दे।'' वह बड़ी हैरान हुई। उसने देखा कि कलगीधर पातशाह ने भोजन स्वयं ही कर लिया और मुझे पता ही नहीं चला। आंखों में प्रेम आंसू छलक पड़े। महाराज जी कहते हैं, ''वैराग मत करो। देखो, हम तेरे घर आ गये। तूने प्यार से बुलाया था और हमने भोजन कर लिया। अब हमें जल पिला दे।'' वे चारों भाई भी अन्दर आ गये। महाराज जी ने उनकी ओर देखते हुए कहा, ''प्रेमियो! यह बीबी तुम्हारी ताई, चाची लगती है और तुम इसके साथ व्यवहार ठीक नहीं करते। यह गुरसिखी में अच्छा नहीं लगता। सिखी तो सबका भला मांगती है। हर रोज हम कहते हैं -

नानक नाम चड़दी कला तेरे भाणे सरबत दा भला।

ऐसे प्यार भरे कौतुक महाराज जी के जीवन के दो चार नहीं बल्कि अनेक हैं। आपने यह फरमान किया कि परमेश्वर से मिलना बहुत आसान है। ऐसे ही अपने शरीर को हिमालय की बर्फीली चोटियों में ले जाकर मत गलाओ, तपो स्थानों में बैठकर निकम्मे मत बनो। परमेश्वर ऐसे नहीं मिलेगा, वह तो प्यार मांगता है। वह तो केवल और केवल प्यार मांगता है।

महाराज जी बच्चों को साथ लेकर बड़े अजीब कौतुक किया करते थे। वहाँ का मुसलमान हाकिम नवाब रहीम खान था। उसे कहते हैं, ''सलाम नहीं करनी।'' वे सात सलामें झुक कर किया करते थे। वे कहते कि नहीं, किसी को सलाम नहीं करनी। बल्कि उसे चिढ़ाया करते थे। वह आप जी के पीछे भागता और आप आनन फानन में गलियों में कहीं छिप जाया करते। आखिरकार एक बार ऐसा कौतुक दिखाया कि नवाब साहिब उसी दिन से आपका श्रद्धालु बन गया।

इधर आनन्दपुर साहिब में गुरू नौवें पातशाह विराजमान हैं और आज आपने हुक्म दिया कि गुरू महाराज जी को आनन्दपुर साहिब ले आओ। पटना से जब विदा होने लगे तो उस समय जो प्रजा आप जी से प्यार करती थी, उस सारी प्रजा के नेत्रों से प्रेम आसुओं की झड़ी लग गई। क्योंकि आप जी का उनके साथ बहुत गहरा प्यार हो गया था। जब रानी मौणी जी को पता चला कि महाराज जी जा रहे हैं, उसे तो इतना अधिक सदमा लगा कि सुनते ही बेहोश हो गई कि महाराज जी हमें छोड़कर चले जायेंगे। उस समय इस प्रकार प्रार्थनाएं करती है -

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै॥
बूंद विहूणा चात्रिको किउकरि त्रिपतावै॥
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै॥
भवरु लोभी कुसम बासु का मिल आपु बंधावै॥
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥

अंग - 708

आज आप जी पूरे वस्त्रों से सजे हुए हैं। सिर पर कलगी सजाई है, कन्धे पर छोटी सी कमान है और पीठ पर छोटी सी तरकश है। आप जी आकर रानी के पास खड़े हो जाते हैं और उन्हें सावधन करते हुए कहते हैं, ''माता! आप इतना विरह क्यों कर रहीं हैं?'' रानी कहती है, ''ऐ मेरे प्यारे रूहानी पुत्र जी! मैं तेरे बिना जिन्दा नहीं रह पाऊंगी। मेरा जीवन तू ही है।'' गुरू महाराज जी कहते हैं, ''माता जी! ऐसा मत कहो। जब मेरे जाने के बाद ये बच्चे पीछे से आया करेंगे, आप मिलकर सत्संग किया करना और धूगणिओ (चनों) का प्रसाद बांटा करना। मेरे इन साथियों को प्यार किया करना। जब ये बच्चे आया करेंगे और आप प्रसाद बांटा करेंगीं तो

मैं इन बच्चों के बीच में बैठा प्रसाद लिया करूंगा।''

करीम खान और रहीम खान दोनों भाई भी बहुत विरह किया करते थे। कहते, ''पातशाह! हम आपके बिना कैसे जीयेंगे?''

महाराज जी कहते, ''जब तुम नमाज़ पढ़ा करोगे, उस समय मैं तुम्हारे सामने खड़ा हुआ करूंगा।'' इसी तरह पण्डित शिवदत्त ने कहा, ''महाराज जी! मैं आपके बिना जी नहीं सकूंगा।'' महाराज जी कहते हैं, ''पण्डित जी! जब आप गंगा के किनारे अपने नेत्र बन्द करके बैठोगे, फिर भजन बन्दगी के बाद जब नेत्र खोलोगे, तो मैं तुम्हारे सामने खड़ा होऊंगा।'' सभी को हौंसला देते हुए, आप जी चलते-चलते घड़ाम गांव में पहुँचे। वहां पर आप जी को कुछ दिन ठहरने का हुक्म हुआ। जहां पर आप ठहरे हुए थे वहाँ पर गुरसिख परिवारों के बच्चे आप जी के साथ खेला करते थे। उस समय आप जी की आयु सात वर्ष की थी। उस इलाके में पीर भीखण शाह माना हुआ पीर था। जब उसने महाराज जी को खेलते हुए देखा तो उसने आप जी को सात सलामें कीं। मुरीदों ने देखा तो हैरान हुए और कहते हैं कि क्या हमारे पीर से भी बड़ा कोई पीर है? उन्होंने पूछा, ''पीर जी! क्या बात है? आपने किसको सलाम की?'' पीर ने कहा, ''वह जो तुम्हें बालक दिखाई देते हैं, वह परम पुरूष है।'' कहते हैं, ''सलामें क्यों की?'' पीर बोले, ''इसलिये कि इनका आदर है। चलो तुम्हें दिखा देते हैं।''

पीर ने कहा, दो अलग-अलग बर्तन मिठाई के लेकर आओ। एक हिन्दुओं का और एक मुसलमानों का होना चाहिये। पीर जी अपने मुरीदों को साथ लेकर गुरू महाराज जी के पास गये और वहाँ पर जाकर दोनों बर्तन रख दिये। महाराज जी ने कहा, ''एक बर्तन और लाओ।'' इतनी देर में सेवक एक बर्तन और ले आए। महाराज जी ने पहले दोनों हाथ एक बर्तन पर रख दिये। फिर एक एक हाथ उन दो बर्तनों पर रख दिया। पीर बहुत योग्य एवं साधना सम्पन्न था। वह समझ गया और नमस्कार की। उस समय मुरीदों ने कहा, ''पीर जी! हमारी समझ में तो कुछ भी नहीं आया। आपकी बातें संकेतों में हुईं, हमें भी समझाओ क्योंकि आपने इशारों में बातें कीं। ऐसा लगता था आप कोई इशारा करते थे तो गुरू महाराज जी भी इशारे में ही जवाब दे रहे थे।'' पीर ने जवाब दिया, ''मुरीदो! मैंने यह जानने की कोशिश की थी कि वह हिन्दुओं के रक्षक होंगे या मुसलमानों के? परन्तु उन्होंने एक बर्तन और मंगवा कर उस पर दोनों हाथ रखते हुए यह सन्देश दिया कि हम दोनों का एक सांझा रास्ता चलायेंगे। इसके बाद मैंने पूछा कि हिन्दुओं और इस्लाम वालों के साथ आपके सम्बन्ध कैसे होंगे? उस समय आपने दोनों हाथ दोनों बर्तनों पर रख दिये। इसका अर्थ था कि उनके लिये दोनों एक समान होंगे। हमारा किसी के साथ कोई विरोध न होगा। हमारी निगाहों में न कोई हिन्दू है न कोई तुरक है। गुरू दशमेश पिता जी ने ऐसा फरमान किया है -

कोऊ भइओ मुंडीआ संनिआसी, कोऊ जोगी भइओ,
कोई ब्रहमचारी, कोऊ जतीअनु मानबो॥
हिन्दू तुरक कोऊ राफजी इमाम शाफी
मानस की जात सबै एकै पहचानबो।।
करता करीम सोई राजक रहीम ओई
दूसरो न भेद कोई भूल भ्रम मानबो।।
एक ही की सेव सभ ही को गरदेव एक
एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो।।

अकाल उसतति

देहरा मसीत सोई, पूजा औ निवाज ओई,
मानस सबै एक पै अनेक को भ्रमाउ है॥
देवता अदेव जच्छ, गंध्रब तुरक हिंदू,
निआरे निआरे देसन के भेस को प्रभाउ है॥
एकै नैन एकै कानु, एकै देह एकै बानु,
खाक बाद आतस औ आब को रलाउ है॥
अलह अभेख सोई, पुरान ऐ कुरान ओई,
एक ही सरूप सबै, एक ही बनाउ है। अकाल उसतति

गुरू घर के अन्दर मनुष्य की पहचान जातियों से नहीं होती। न हिन्दू बहुत नजदीक है न ही मुसलमान दूर है, सारे ही नजदीक हैं। देहुरा (मन्दिर) और मस्जिद दोनों ही परमेश्वर की बन्दगी करने के स्थान हैं। दोनों का ही आदर करना चाहिये। साध संगत जी! गुरू महाराज जी का ऐसा आदर्श था। ऐसे प्यारे-प्यारे कौतुक आप जी ने किये कि यदि संसार उनकी गिनती करता चला जाये तो भी खत्म न हों।

अब आप जी के शरीर की आयु नौ वर्ष की हो गई। आप जी बाहर खेलने के बाद घर में आये। क्या देखते हैं कि गुरू महाराज जी का दरबार सजा हुआ है। दरबार में बहुत बड़े-बड़े विद्वान, गणमान्य बड़ी-बड़ी हस्तियां, महाराज जी के हजूर में बैठी हैं। उन दिनों ब्राह्मणों के लिये केश रखने जरूरी हुआ करते थे। महाराज जी के दरबार में बहुत सुन्दर स्वरूप वाले लोग बैठे हैं। सभी के हाथों में रूमाल हैं। थोड़ी-थोड़ी देर बाद आँखों से आंसुओं को पोंछ लेते हैं। उनका

प्रधान वार्ता सुना रहा है, ''महाराज जी! अब तो जीने का कोई धर्म नहीं रहा। धर्म खतरे में पड़ गया है। कश्मीर के पण्डितों के मुखिया ने हाल सुनाया कि जालिम खान जो कश्मीर नगर का गर्वनर है। उसने यह काम अपने हाथ में लिया है। वह 100 बड़े-बड़े हिन्दू विद्वान महापुरुष पकड़ लेता है और उन्हें जेहलम दरिया के किनारे लाकर जंजीरों से बान्ध कर खड़ा कर देता है। वहाँ पर काफी लोग इक्ट्ठे होते हैं। उन सभी के सामने पूछा जाता है कि क्या तुम धर्म बदलना चाहते हो? जो तो धर्म बदल लेते हैं, ठीक, वरना बाकियों को धर्म बदलने के लिये जान से मार देने की धमकियां देते हैं। सच्चे पातशाह जो नहीं मानते, उन सबको एक जंजीर में बान्धकर उनकी गठड़ी बान्ध दी जाती है। फिर उन्हें धक्का देकर दरिया में फैंक दिया जाता है। इसके बाद जब उनके गले में पानी भर आता है और वे डूब-डूब कर मरने लगते हैं। वे बहुत हाथ पैर मारते हैं। बचने की पूरी-पूरी कोशिश करते हैं। वे सभी हाकिम इनकी मौत का तमाशा देखते हैं। अन्त में वे सभी मौत के गाल में चले जाते हैं। फिर आगे जाकर जंजीर खोल दी जाती है और लाशें दरिया में तैरती हुई दूर तक चली जाती हैं। इस प्रकार का अत्याचार वहाँ का गर्वनर हम लोगों के साथ कर रहा है।

एहु हमारा जीवणा तू साहिब सचे वेखु॥अंग - 1380

महाराज जी! हमारी कोई इज़्ज़त नहीं है। पहले दिन ही हाकिमों के घर डोला भेजना पड़ता है। न तो किसी लड़की की सत धर्म कायम रह पा रही है न ही किसी व्यक्ति का धर्म बचा है? न हम पूजा पाठ कर सकते हैं? न ही कोई धर्म कर्म निभा सकते हैं? पूजा पाठ पर पाबन्दियां लगा दी गई हैं। किसी प्रकार की कोई बातचीत नहीं कर सकते। कोई शास्त्र वगैरा नहीं पढ़ सकते। यदि पढ़ते हैं तो वे शास्त्रों को छीन लेते हैं और उन्हें जला देते हैं।

पातशाह जी! हम सभी दुखी होकर अमरनाथ गुफा में जाकर छिप गये थे। वहाँ पर जाकर शिव जी महाराज जी के सामने बहुत मिन्नतें कीं, बड़ी प्रार्थनाएं की, ''हे प्रभु! अब तीसरा नेत्र खोलो। इन दुष्टों का संहार करो। पातशाह! प्रार्थना करते करते महीना बीत गया। कहीं से कोई जवाब नहीं मिला।'' ऐसे लगने लगा कि परमात्मा होता ही नहीं है। लगता है परमेश्वर भी बहरा हो गया है। बहरा परमात्मा कुछ भी नहीं सुन रहा। बस एक बार एक आवाज़ आई थी जो बोली, ''हे पण्डितो! इस समय हिन्दू धर्म की रक्षा करने वाला कोई देवता नहीं है क्योंकि युग बदल चुका है। कलयुग आ गया है। किसी देवता ने मदद नहीं करनी। न शिवजी मदद करेंगे और न ही कोई अन्य देवता सहायता करेगा। अब तुम्हारा रक्षक आनन्दपुर साहिब में गुरू नानक देव जी की गद्दी पर नौवां स्वरूप धारण करके बैठे हैं। उनकी शरण में जाओ। उनके पास जाकर प्रार्थना करो।

''हे सच्चे पातशाह! सारे भारत वर्ष में से हम पण्डित कृपा राम को मुखिया बना कर लाये हैं जो गुरू घर का पण्डित भी है और आपका विश्वास पात्र भी है। हे सच्चे पातशाह, हमारी बाजू पकड़ो, हमारी रक्षा करो। हमारी रक्षा करने वाला कोई नहीं है।'' उस समय गुरू दसवें पातशाह जैसा कि पहले बताया गया है, खेलते हुए बाहर से आए हैं। गुरू महाराज जी का ऊँचे चबूतरे पर आसन लगा है जिसे आजकल मंच कहते हैं। भारतवर्ष के जितने भी बड़े-बड़े विद्वान आये हुए थे, सारे उदास और चिन्तित बैठे हैं। मन हारने वाली बातें कर रहे हैं। महाराज जी बहुत गम्भीर होकर वार्ता सुन रहे थे और गहरे ध्यान में डूबे हुए थे। इस खामोशी को तोड़ने के लिये गुरू दसवें पातशाह पिछली तरफ से मंच पर चढ़े। पहले इधर-उधर देखते रहे। थोड़ी देर बाद दोनों बाजू पिता के गले में डाल लीं। इससे पहले की वे कुछ कहते, आप तुरन्त ही आकर गोद में बैठ गये। महाराज जी ने नेत्र खोले और उनकी ओर देखा। आपस में एक दूसरे को बड़े ही रहस्यमय ढंग से देखा। उस समय आपने प्रार्थना की, ''पातशाह पिता! गुरू जी, क्या बात है? इतनी उदासी क्यों है? ये लोग कौन हैं? क्या चाहते हैं? कौन सी ऐसी चीज है, जिसे आप इन्हें नहीं दे सकते?'' उस समय सारी व्यथा बताई कि इस तरह से ये लोग अपना दुखड़ा सुना रहे हैं। बालक गोबिन्द जी ने कहा, ''ये तो बड़ी उम्मीदें लगा कर आये हैं।

फिर आप जी ने इनका क्या इलाज सोचा है?''

गुरू महाराज ने कहा, ''लाल जी! इस समय तो इसका यही इलाज है कि कोई पूर्ण महापुरूष अपने शीश की बलि दे तो काम बन सकात है। यह जो पहाड़ की तरह ठोस जोर जुल्म की आंधी चल रही है, उसके सामने छाती तान कर खड़ा हो जाये। वही इस बाढ़ को रोक सकता है। उसका बहा हुआ खून ही ठीक कर सकता है। इसके अतिरिक्त और कोई हल नहीं है।'' उस समय दसवें पातशाह ने बहुत अधिक न सोचते हुए तुरन्त चरणों में बैठकर प्रार्थना कर दी -

जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै
इहु बिरदु सुआमी संदा॥ अंग - 544

कहने लगे, ''पिता जी! गुरू घर का नियम है।''

जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै
इहु बिरदु सुआमी संदा॥ अंग - 544

आपकी शरण आए हैं। इन्होंने आप शरण ली है क्योंकि आपके अन्दर केवल पिता की भावना नहीं बल्कि गुरू दशमेश पिता की भावना धारण की है। कहते हैं जो भी आपकी शरण में आया, जिसने भी आपकी शरण ली, वह फिर दुखी नहीं हुआ करता। महाराज जी कहते हैं, ''पुत्र! बलिदान देना है।'' गुरू गोबिन्द राये पुत्र ने कहा, ''हाँ, पिता जी! इस समय दुनियां में आपसे महान और कोई महापुरुष नहीं है। आप अपने शीश की बलि देकर इस हिन्द की बहती जा रही इज्जत को बचा लो।'' इस तरह गुरू महाराज जी इन दीन दुखियों की बाजू पकड़ते हैं और शहादत का जाम पीकर, अपने खून की आहुति देकर, डूबते हुई हिन्द का बेड़ा पार लगा देते हैं।

उस समय आप जी की आयु लगभग 11 वर्ष की थी, जब आपने पंथ की बागडोर सम्भाली। सबसे पहले मसन्दों के साथ आपका पाला पड़ा। मसन्द पूजा का धान खा-खा कर इतनी मोटी मति के हो चुके थे कि उनके दिमाग में यह बात घर कर गई थी कि गुरू को बनाना और हटाना हमारे बाएं हाथ का खेल है। महाराज जी ने वह मसन्द प्रथा समाप्त कर दी। सिक्खों के साथ सीधा सम्बन्ध बनाकर आप जी ने अमृत का बाटा तैयार किया।

पहले दो प्रकार के सिख थे। एक तो गुरू के सिख कहलाते हैं। यही गुरू के सिख, मसन्दों के शिष्य हुआ करते थे। मसन्द उनके नाम रखा करते थे। ये मसन्द अपने कारनामों से इतने गिर चुके थे कि उनकी बातें सुनना केवल समय बर्बाद करना होता था। गुरू महाराज जी के समय वे बहुत गिर चुके थे। ऐसे लोगों के गुरू के सिख कहा करते थे।

एक को खालसा कहते थे जो सीधा ही गुरू से नाम लेते थे। अब गुरू महाराज जी ने कहा, ''प्रेमियो! अब जो इसके बीच में एक दीवार बनी हुई है, यह दीवार नहीं रहने देनी। अब तुम सभी तैयारी करके अमृतपान करो।''

हरि सच्चे तखत रचाइआ सति संगति मेला।
नानक निरभउ निरंकार विचि सिधां खेला।
गुरु मनाई मनाई कालका खंडे की वेला।
पीवहु पाहुल खंडेधार हुइ जनम सुहेला।
गुर संगति कीनी खालसा मनमुखी दुहेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला॥

भाई गुरदास जी, वार 14/1

गुरुओं का कोई हिसाब किताब नहीं रहना था। यदि गुरू महाराज खण्डे बाटे की अमृत की रीत न तोड़ते। दूसरी बात यह थी कि ब्रह्मज्ञान में तो गुरसिख पूरे हो गये थे, देह अधिआस टूट चुका था, देह अधिआस को भी किसी काम में लगाने के लिये, आपने वीर रस का टीका लगाया कि जुल्म को चुपचाप सहन नहीं करना। धर्म की हानि होती देखकर, वहाँ से चुप-चाप भागना नहीं, वहाँ पर अपने शरीर का भी बलिदान देना पड़े तो दे देना चाहिये। दशमेश पिता जी ने पहले अपने पिता का शीश बलिदान दिलवाकर दिखाया फिर अपने चारों साहिबजादों का बलिदान दिला कर दिखाया। बेअन्त अपने सिखों का, रिश्तेदारों का, माता जी का, पिता जी का, ये सभी कुर्बानियां दिलवाकर एक मिसाल कायम की। एक नया नरोया जीवन सिखाया, ''प्यारेओ! न किसी से डरना है, और न ही किसी को डराना है?'' साथ ही यह भी फरमान किया कि तुमने और किसी का जाप नहीं करना, कोई मन्त्र नहीं जपना, अकालपुरुष जाग्रत ज्योति है। हर एक के साथ है, घट घट में व्याप्त है। अन्दर बाहर वही है -

सो अंतरि सो बाहरि अनंत॥
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत॥
धरनि माहि आकास पइआल ॥
सरब लोक पूरन प्रतिपाल ॥
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु ॥
जैसी आगिआ तैसा करमु ॥
पउण पाणी बैसंतर माहि ॥
चारि कुंट दह दिसे समाहि ॥
तिस ते भिंन नही को ठाउ ॥
गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ ॥ *अंग - 293*

जो अकाल पुरूष है, तुम्हारे साथ रहने वाला, तुम्हारी श्वांस श्वांस प्रति पालना करने वाला, हर जगह तुम्हारी मदद करने वाला, उसका ध्यान धरो और भूलकर भी किसी और का जप न करो।

जागत जोति जपै निस बासुर,
एक बिनां मन नैक न आनै॥
पूरन प्रेम प्रतीत सजै,
ब्रत गोर मड़ी मट भूल न मानै॥
तीरथ दान दइआ तप संजम
एक बिना नहि एक पछानै।।

पूरन जोत जगै घट मै
तब खालस ताहि नखालस जानै।।

महाराज जी कहते हैं कि गुरसिख में दो बातें होनी चाहिये। एक तो पूरी प्रतीति होनी चाहिये कि वाहिगुरू मेरे अंग संग सदा रहता है। दूसरा अन्दर से खाली न हो। प्यार भी मेरे साथ हो। बाकी किसी मढ़ी, मसान, गुफा को शीश नहीं झुकाना। जब शीश ही गुरू को दे दिया तो फिर शीश या तो गुरू प्यारों के सामने झुकेगा या गुरू के आगे झुकेगा,और किसी के आगे नहीं झुकाना चाहिये। दुनियां के किसी बादशाह के सामने नहीं झुकेगा। क्योंकि सिख बे-गर्ज़ होते हैं -

जो जनु निरदावै रहै सो गनै इंद्र सो रंक॥
अंग - 1374

किसी का बुरा नहीं चितवना, सब का भला चाहना है। दिल से अरदास करनी है।

नानक नाम चड़दी कला तेरे भाणे सरबत दा भला॥

किसी के साथ वैर नहीं करना, किसी का बुरा नहीं चितवना, किसी की निन्दा नहीं करनी, ईर्ष्या नहीं करनी, जो ईर्ष्या करता है, वह सिख नहीं कहला सकता। जो गुरसिख है, सिख की निन्दा करता है, वह सिख, सिख नहीं है क्योंकि उसे गुरू के सिद्धान्त का पता ही नहीं है कि गुरू महाराज जी क्या कहते हैं?

कई गुरू के सिख ऐसे ही होते हैं कि बाहर से भेष धारण किये रहते हैं, वैसे दूसरे लोगों की, सिखों की, सन्तों की निन्दा करते हैं, उनसे ईर्ष्या रखते हैं, ईर्ष्या के कारण दूसरों के लिये दुर्वचन बोलते हैं। महाराज जी कहते हैं कि गुरसिख का जीवन ऐसा नहीं हुआ करता। गुरसिख ने तो अकाल पुरूष को घट-घट में व्याप्त देखना है -

तीरथ दान दइआ तप संजम,
एक बिना नहि एक पछानो॥ *(खालसा)*

एक नाम के सिवाय, और किसी भी चीज की महानता मन में मत लेकर आना। अन्दर बाहर सभी जगह परमेश्वर के दर्शन होने लग जाये।

गुरहि दिखाइओ लोइना॥
ईतहि ऊतहि घटि घटि घटि घटि तूंही तूंही मोहिना॥
अंग - 407

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥
अंग - 293

जब मन में प्रकाश की ज्योति जग जाये तो फिर महाराज जी कहते हैं -

.... तब खालस ताहि नखालस जानै॥ (खालसा)

उन नखालस लोगों में से उसे खालसा समझना। इस तरह का उपदेश देने के बाद, महाराज जी कहते हैं, ''प्यारे जी! यदि तुम अकाल पुरूष के साथ लगोगे, गुरू के साथ मिलकर रहोगे तो गुरू की शक्ति तुम्हारे अन्दर प्रवेश कर जायेगी और मेरा तेज़ तुम्हारे अन्दर हमेशा रहेगा। इस तरह से फरमान किया है -

खालसा अकाल पुरख की फौज॥
प्रगटिओ खालसा प्रमात्मा की मौज॥
जब लग खालसा रहे निआरा॥
तब लग तेज दीऊ मैं सारा॥
जब इह गहै बिपरन की रीत॥
मैं न करौं इन की प्रतीत॥ *सरब लोह ग्रंथ में से*

ऐसे सतगुरू श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी महाराज जिन्होंने अपना तेज भी दे दिया, अपनी शक्ति भी दे दी। यहाँ पर ही नहीं रूके बल्कि गुरू पदवी, गुरू ग्रन्थ साहिब के ताबे पाँच सिंहों को दे दी। यह अधिकार उन्हें दे दिया कि तुम आगे अमृतपान करवा कर, गुरू वाला काम करो। नाम की दात दिया करो।

कुछ प्रेमियों ने महाराज जी से प्रार्थना की, ''सच्चे पातशाह! हम पर मुसीबतें आती हैं, विघ्न आते हैं जन्त्र-मन्त्र वाले हमें तंग करते हैं, कोई विधि बताइये?'' महाराज जी कहते हैं, ''जहाँ पांच प्यारे, साधना सम्पन्न प्रवेश करेंगे, तुम उनकी सेवा करना, उन्हें भोजन खिलाना। फिर तुमने जो मांगना हो, उनसे मांग लेना। मैं उनकी रसना पर रहूँगा।''

पंथ खालसा खेती मेरी
करहूं संभाल मै तिस केरी।

मैंने उनकी रक्षा करनी है। मैंने उन्हें छोड़ कर नहीं चले जाना। मैं अपने आपको शबद में लीन कर लूंगा। शबद की साधना करो। शबद को समझो। शबद को हृदय में बसाओ। फिर तुम्हारा यहाँ पर ही नहीं बल्कि आकाश में भी राज होगा।

जा का कहिआ दरगह चलै॥
सो किस कऊ नदरि लै आवै तलै॥ *अंग - 186*

लेकिन खालसा बन कर रहना। जिसकी शर्त है -

आतम रस जिह जानही, जो है खालस देव॥
प्रभ महि मो महि, तास महि, रंचक नाहन भेव॥
सरब लोह ग्रंथ में से

जो आत्म रसिया बन गया, जिसने द्वैत की दीवार गिरा दी, सभी के अन्दर एक ही परमेश्वर को देखने लग गया वही खालसा है, कहते हैं जो आत्म मण्डल में प्रवेश कर गया, जिसे हर जगह एक ही परमेश्वर नज़र आता है, कहते हैं - वही खालसा है।

प्रभ महि, मो महि, तास महि, रंचक नाहन भेव॥

कहते हैं मुझ में और वाहिगुरू में और उस खालसा में कोई अन्तर न समझना। हम तीनों ही एक रूप हैं। इस तरह के सिद्धान्त गुरू महाराज जी ने संसार को दिये जिनका हम प्रचार नहीं कर सके। साध संगत जी! कोई तो उनके युद्धों का हाल बताये जा रहा है कि उन्होनें इस तरह से कुर्बानियां कीं, ऐसे लड़ाईयां लड़ीं, युद्ध किये। युद्ध के कौतकों का वर्णन कर रहे हैं। लड़ाई तो और जरनैलों ने भी की परन्तु गुरू महाराज जी के युद्ध की विशेषताएं थी। लोगों ने शहीदियां भी बहुत दीं। इस्लाम वालों ने बहुत शहीदियां दी, लेकिन यह एक नई चीज़ है कि पूर्ण सर्वज्ञ होते हुए भी संसार से भागने की बजाये, संसार में रहते हुए, दीन दुखियों के दुख दूर करे। यह शिक्षा दृढ़ करवाई कि संसार में यदि कोई दुख आ जाये तो दूर बैठकर दुख को देखने की जरूरत नहीं है बल्कि दुखियों से मिलकर उनका दुख दूर करो। जितनी जिसमें परमेश्वर ने सामर्थ्य दी है, उसका प्रयोग करो।

जैसा बितु तैसा होइ वरतै
अपुना बलु नही हारै।। अंग - 675

जितना बल दिया है, सभी के साथ सांझा करो। अपने सुख को थोड़ा कम करो। इस संगत पर कितना असर है। बाढ़ें आईं, सभी के दिलों में उन बाढ पीड़ितों के लिये दर्द उठा। एक दो नहीं, सभी ने कमर कस ली। दिन रात, भागते फिरे। जो महिलाएं कभी घर से बाहर नहीं निकलती थीं, वे भी सहायता में जुट गईं। पल्ले गले में डालकर बेगाने घरों के दरवाज़ों के आगे खड़ी होकर मांगती थीं कि हमें बाढ़ पीड़ितों के लिये कुछ सहायता दो। वे जो गरीब थे, जिनका बाढ़ में सब कुछ बह गया, वहाँ पर भेजना है। जो कुछ भी दे सकते हो, दे दो। कोई बर्तन, कपड़ा, पैसे जिस चीज़ की समर्थ हो मांग कर, इक्ट्ठी करके लाईं। खालसा का धर्म होता है, दुखों को निवृत करना, दुखियों के बीच जाना, उनके दुखों को अनुभव करके, उनके साथ हमदर्दी बढ़ाना और उन्हें अपना बनाना।

यह आदर्श है। जब यह आदर्श फैलेगा तो सारे विश्व को अपने कलेजे में भर लेगा। मन दुखी होता है। लास ऐनजलैंस में जब भूचाल आया, हज़ारों की संख्या में घर बर्बाद हो गये। अरबों डालरों का नुकसान हो गया। दर्द होना, दर्द मन्दों के प्रति दिल में भाव उठना, चाहे हम जानते हैं या नहीं, चाहे अमेरिका के हों या किसी और देश के हो, यदि ऐसा ज़ज़्बा मनुष्य के अन्दर नहीं उठता तो फिर मनुष्य पशु समान हुआ करता है। वह स्वार्थी हुआ करता है। वह केवल अपने लिये ही जीता है। वह संसार का साझां नहीं होता। गुरू दशमेश पिता ने खालसा को सार्वजनिक बनाया है। इसका सिद्धान्त सभी के लिये सांझा है जो आज की दुनियां को शान्ति दे सकता है। गुरू महाराज जी ने न ही खालसा को वैर करना सिखाया।

बिसरि गई सब ताति पराई॥ जब ते साधसंगति मोहि पाई॥
ना को बैरी नही बिगाना॥ सगल संगि हम कउ बनि आई॥
जो प्रभ कीनो सो भल मानिओ कह सुमति साधू ते पाई॥
सभ महि रवि रहिआ प्रभु एकै पेखि पेखि नानक बिगसाई॥ अंग - 1299

जब गुरू महाराज जी आनन्दपुर साहिब से आगे माछीवाड़े गये तो वहाँ के हाकिम गवाहियां मांगते हैं कि ये गुरू गोबिन्द सिंह जी कौन है? उस समय गवाही देने वाले मुसलमान भाई थे। परवाह नहीं कि मैं राजा हूँ और ऊपर से हाकिम का हुक्म आ जायेगा और राज ज़ब्त हो जायेगा। गुरू दशमेश पिता जी की हस्ती हिन्दुओं और मुसलमानों को तो क्या प्रत्येक देशवासी के मन में घर कर गई थी कि अपने आपको बड़े से बड़े संकट में डालकर, गुरू महाराज जी की मदद करके, खुशियां प्राप्त करें। बस यही एक आशा थी। ऐसी हस्ती संसार में बहुत कम आती हैं।

हम अपने आपको भाग्यशाली कह सकते हैं कि हम उस खानदान से सम्बन्ध रखते हैं और सम्बन्ध भी कितना है कि हमारे नाती पिता साहिब गुरू गोबिन्द सिंह जी है, माता साहिब कौर जी हमारी माता है। आनन्दपुर के हम वासी हैं। इतने नज़दीक आकर फिर दूर हों, फिर एक दूसरे का विश्वास न करें, एक दूसरे की निन्दा करें, फिर यह मूर्खता नहीं तो और क्या है? वह तो महामूर्ख है जिसने गुरसिखी को जाना नहीं कि गुरसिखी क्या है?

साध संगत जी! आप सभी ने गुरू दशमेश पिता के बारे में जितना हो सका है, श्रवण किया है।

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक दिसम्बर, अंग - 27)

इस प्रकार आन्तरिक मानसिक शक्तियाँ जो बन्दगी करने के उपरान्त प्राप्त हो जाया करती हैं, वे सिद्धियाँ कहलाती हैं। बड़ी-बड़ी सिद्धियाँ आठ कहलाती हैं। दस और छोटी छोटी मिलाकर कुल 18 हो जाया करती हैं जब साधक की सुरत सहंसरार दल कमल में पहुँचती हैं उस समय स्वाभाविक ही ये शक्तियाँ अन्दर से प्रकट हो जाया करती हैं। इनमें यदि साधक लीन हो जाए तो उसे उसी तरह मोह लिया करती हैं जैसे सुन्दर स्त्रियाँ प्रत्यक्ष रूप में मोह लिया करती हैं। यह चार प्रकार की माया बहुत प्रबल है जिसे महाराज जी ने नागिन का रूप देते हुए कहा है कि यह संसार को ही खा जाती है।

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ।
मनमुख खाधे गुरमुखि उबरे जिनी सचि नामि चितु लाइआ। *अंग - 643*

पहली प्रकार की माया स्थूल रूप में हुआ करती है जो पैसा-टका, जायदाद, अनेक प्रकार के व्यापार काम धन्धे, अनेक प्रकार की मान्यताएं इस जीव को अपना मोहिनी रूप दिखाकर परमेश्वर की ओर से पूरी तरह से भुला कर रखती हैं क्योंकि गुरू महाराज जी ने माया का स्वरूप बताते हुए फरमाया है कि यह माया शक्ति **attachment** (मोह) पैदा करती है और राग का क्लेश पूरी तरह से मन में फैल जाता है जो मन में से होता हुआ, बुद्धि, चित्त 'मैं' भाव से साथ चिपक जाता है द्वैत हृदय में उत्पन्न हो जाती है, वाहिगुरू जी को पूरी तरह से भूला रहता है यदि कहीं यह याद भी करता है तो रस से हीन, विश्वास हीन केवल एक **un-concerned object** (असम्बन्धित फालतू चीज़) की तरह याद में से पार हो जाता है। वाहिगुरू जी को छोड़कर दूसरे भाव में इसका चित्त हर समय लगा रहता है। जब दूसरा भाव हृदय में जाग्रत होता है तो वाहिगुरू जी की सत्यता, परिपूर्णता और ऐक्यवाद पर कोई भी विश्वास नही रहा करता। भजन बन्दगी करता हुआ भी, नमाज़ पढ़ता हुआ भी, गिरजाघर में जाकर दुआ करता हुआ भी, प्रभु के साथ आन्तरिक भाव से नहीं जुड़ता क्योंकि इसका चित्त माया ने मोह लिया होता है। महाराज जी का फ़रमान है -

एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै
भाउ दूजा लाइआ। *अंग - 921*

और एक जगह पर आप फ़रमान करते हैं कि -

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरण बिसारे।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे॥ *अंग - 857*

सो यह माया मोहिनी, जब जीव संसार में पैदा होते ही पहली सांस ही लेता है उसी समय व्याप्त जाया करती है। माता के गर्भ में जिस नाम धुन के सहारे उल्टा लटक कर भी दुःख महसूस नहीं करता था, वह पैदा होते ही जब संसार का प्रकाश देखता है तो उसे पेट भरने के लिए फुरना आता है। उसे माँ का दूध आकर्षित करता है। उसका प्यार दूध के साथ हो जाता है। इसलिए महाराज जी फ़रमान करते हैं -

पहिलै पिआरि लगा थण दुधि। *अंग - 137*

कई प्रेमियों के मनों में यह शंका पैदा होती है कि शायद बच्चे को दूध आकर्षित न करता हो। पर ऐसा नहीं, माँ के स्तनों को मुँह में डालते ही उसका मुँह हरकत में आ जाता है, उसे किसी ने भी प्रशिक्षण (**training**) नहीं दी होती कि मुँह को इस प्रकार दबाना, तब दूध निकलेगा। यह सारा प्रबन्ध कुदरत द्वारा पहले ही किया होता है।

एक आप बीती यहाँ बता देना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। 1948 में हमारे परिवार ने तराई के इलाके जिला रामपुर में अन्य आबादकारों के साथ मुरब्बे (क्षेत्र) खरीद लिए पर जहाँ हम रहते थे वहाँ चारों ओर घने जंगल, बड़े-बड़े वृक्ष, झाड़ियाँ तथा **tiger grass** बहुत गहरी थी। प्रतिदिन हमारा पाला जंगली जानवरों के साथ पड़ता था। जहाँ हमने रहने के लिए झौंपड़ियाँ डाली हुई थीं वहाँ से शेर प्रतिदिन गुजर कर जाया करते थे। सारी रात नगर पालिका के लैम्पों की तरह लैम्प जलते रहते थे जिसकी वजह से वह हमारी छोटी सी आबादी में नहीं आया करता था। उसके साथ ही चीते, लकड़बग्घे तथा बघिआड़ आदि भी घूमते रहते थे और जंगल

बहुत सघन तथा लम्बा चौड़ा था। अभी पंजाबियों ने जमीनें पूरी तरह से आबाद नहीं की थीं। सो जब कोई हमारा बैल या भैंस खुल कर जंगल में चली जाती तो जानवर उसे मार कर खा जाया करते थे। कई बार बाहर आकर भी झपटा मार दिया करते थे। पर मनुष्यों का शोर शराबा उन्हें आबादी से दूर रखा करता था। वहाँ के **local** (स्थाई रहने वाले) लोग हमारे जंगलों में से निकला करते थे तो उनके गानों की ऊँची ऊँची आवाज़ें आया करती थीं, उनके हाथों में जलती हुई मशालें हुआ करती थीं जिन्हें देखकर जंगली जानवर दूर ही रहा करते थे। पर वैसे हमने यह अनुभव किया हुआ था कि बिना किसी मतलब के शेर न तो किसी जानवर को मारता है, न ही आदमी को खाता है। मनुष्यों को उससे डर कम ही लगता था पर और भयंकर जानवर बहुत थे जैसे कि विष खपड़ा, वह साँप से बड़ा हुआ करता है। यदि वह पंजा पैर पर मार दे तो उसकी ज़हर का कोई इलाज नहीं हुआ करता था। उससे बच कर चलना पड़ता था। हमारे फार्म में 22 फुट लम्बी तथा डेढ़ फुट चौड़ी साँप (सरालें) आम ही देखने को मिल जाया करती थीं। वह हिरनों को पकड़ लेती थीं या हर छोटे से जानवर जैसे बकरी आदि को पूरी ही निगल जाया करती थीं। पर गुरू महाराज जी के भरोसे हम वह जंगल खोदते रहते थे। जैसे जैसे धरती साफ होकर दूर दूर तक खुली होती जाती थी, डर भी कम हो जाया करता था। एक बार ऐसा हुआ कि हमारी भैंस जो प्रसूति होने वाली थी वह रात को रस्सा तुड़वा कर जंगल में चली गई। सघन जंगल होने के कारण हमने उसे बहुत नहीं ढूँढा। पास पास घूम फिर कर आ गये, जब न मिली तो हमने समझा कि उसे शेर आदि जानवरों ने खा लिया है पर हमारी हैरानी की सीमा ही न रही जब यह देखा कि भैंस अपने कटड़े सहित जंगल में से बाहर निकल कर आ गई और रींग रही थी। कटड़ा बहुत तन्दरूस्त था। हमने यह सोचा कि यदि हमारे सामने जानवर प्रसूति हो तो उसके कटड़े-बछड़े को पकड़ कर उंगली चटवाते हैं, फिर थन उसके मुँह में डालते हैं पर जंगल में प्रसूति हुई गाय या भैंस के कटड़े को किसी ने भी नहीं सिखाया। उसे पैदा होते ही थोड़ी देर बाद भूख लगी, दूध की सुगन्धि ने उसे अपनी ओर आकर्षित कर लिया और उसने दूध पी लिया और इसी तरह से वह पाँच-छह दिन दूध आप ही पीता रहा। सो इसलिये गुरू महाराज जी ने यह फरमान किया है कि बच्चा माँ को जानने से पहले दूध के साथ प्यार लगाता है -

पहिलै पिआरि लगा थण दुधि। दूजै माइ बाप की सुधि।
तीजै भया भाभी बेब। चउथै पिआरि उपंनी खेड।
अंग - 137

जिस नाम धुन के सहारे माता के गर्भ में उल्टा लटक कर भी यह कष्ट नहीं मानता था उसे पैदा होते ही एक दम भूल गया और मायावी चीज़ों के साथ चाहे वह दूध है, चाहे माँ बाप हैं, चाहे भाई या रिश्तेदार हैं, इनके अन्दर पूरी तरह से मस्त हो गया। जैसे जैसे उम्र में बड़ा होता जाता है वैसे वैसे उसकी सुरत उसी हिसाब के साथ बड़े पैमाने पर जुड़ने लग जाती है। सो यह प्रभाव माया का है। गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

जैसी अगनि उदर महि तैसी बाहरि माइआ।
माइआ अगनि सभ इको जेही करतै खेलु रचाइआ।
जा तिसु भाणा ता जंमिआ परवारि भला भाइआ।
लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ।
एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ।
कहै नानकु गुर परसादी जिना लिव लागी तिनी विचे माइआ पाइआ॥
अंग - 921

दूसरी प्रकार की माया, अपने बाल बच्चों, स्त्री आदि चेतन माया कहलाती है। जिसकी शक्ति जड़ माया से बहुत अधिक हुआ करती है। पर स्त्री के वार से बचना किसी सूरमा का ही काम हो सकता है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि इस वार को सहन न कर सके। मच्छंदर नाथ राजा अमरू के मृतक शरीर में प्रवेश करके विषय विकारों में गर्क हो गया। जैमिनी ऋषि व्यास जी के बार-बार मना करने पर भी काम के बाण से घायल हो गया। इसी प्रकार श्रृंगी ऋषि अपने पिता को छोड़कर एक वेश्या के घर गृहस्थी बन कर रहने लगा। काम बाण मनुष्य की सुध-बुध समाप्त कर देते हैं। उसे भले बुरे का ज्ञान नहीं रहता और गुरू महाराज जी भी इसके बारे में फ़रमान करते हैं -

हे कामं नरक बिस्रामं बहु जोनी भ्रमावणह।
चित हरणं त्रै लोक गंम्यं जप तप सील बिदारणह।
अलप सुख अवित चंचल ऊच नीच समावणह।
तव भै बिमुंचित साध संगम ओट नानक नाराइणह॥
अंग - 1358

और महाराज जी आगे फ़रमान करते हैं कि जोगी जगंम, सन्यासी सभी काम के वार से डरते हैं -

(शेष पृष्ठ 38 पर)

बिनु हरि भजन नाही छुटकारा

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक अक्टूबर, पृष्ठ - 22)

अतः ऐसे संस्कार होते हैं।

जब मैं नौकरी कर रहा था, उस समय मुझे एक प्रेमी दस हजार रुपए, जो कि आज के दस लाख रुपयों के बराबर था, केवल इसलिए दे रहा था कि मैं केवल आधे दिन की छुट्टी ले लूँ ताकि वह ऊपर के अधिकारी से अपना गलत काम करवा सके। वह छुट्टी डाक्टर से तथा ऊपर के अधिकारी से मंजूर भी करवा कर ले आया। उसने दस हजार रूपया लाकर सामने रख दिया और बोला दस हजार में तीन कोठियाँ आ जाएँगी क्योंकि उन दिनो में तीन हजार रूपयों में तीन कमरों वाली कोठी तैयार हो जाती थी।

अब मेरे सामने क्या था? मेरे सामने यह था कि कोठियाँ तो पड़ जाएँगी, अमीरी भी हो जाएगी लेकिन यह काम तो गलत है। वह बोला, आपके ऊपर तो कोई बात आनी ही नहीं, आप तो बस आधे दिन के लिए सीट खाली कर दो। उसका नाम हुक्म चन्द था। मैंने कहा हुक्म चन्द! मुझे यह तो पता होगा कि मैं अपनी सीट को इसलिए खाली कर रहा हूँ ताकि मेरी अनुपस्थिति में गलत काम हो जाए। ऐसा करके तो मेरा मनुष्य जन्म यूँ ही बरबाद हो जाएगा और फिर फिर मैं इस चक्रव्यूह में ऐसा फँस जाऊँगा कि मुझे निकलना मुश्किल हो जाएगा। तीन कोठियाँ जिसके पास हो तो फिर उनका किराया ही लाखों रुपए बन जाता है। मैंने कहा, मैं यह कार्य नहीं करूँगा क्योंकि मैं इनमें फँस कर ही रह जाऊँगा और फँसे हुए के लिए निकल पाना बहुत ही कठिन हो जाता है।

अतः यह दलेरी है और उसने दलेरी की। उसने अपनी सारी जायदाद बेच दी। जहाँ-जहाँ पता था उसने, उन्हें उनकी रकम वापिस कर दी। जब लगभग सवा-डेढ़ महीने बाद वह आया तो उसने देख लिया और कहने लगा, आज तुम कैसे आए हो? उसने नौकरी वगैरह छोड़ दी और साधुओं के पास जाकर बन्दगी करने लग पड़ा, क्योंकि दिली तौर पर सच्चा व्यक्ति था।

वह कहने लगा भद्रपुरुष! अब तुम्हारे सारे ही पाप शून्य हो गए हैं और तुम्हारे पुण्य, पापों की अपेक्षा कहीं अधिक बढ़ गए हैं। अब तो तुम्हारे जीवन में पुण्यों का फल चल रहा है। अब साधुओं की संगत करके पाप व पुण्य से ऊँचे हो जाओ। इस प्रकार से आदमी पहले तो पाप करता है और उसके बाद उसे justify करता है लेकिन जब उसे पापों का फल भोगना पड़ता है फिर दुखी होता है।

अतः भाई गुरदास जी कहते हैं कि एक महिला ने इतने अधिक पाप कर लिए कि मानो उसने अपने गले में पापों का हार ही डाल लिया -

गनका पापणि होइकै पापाँ दा गलि हारु परोता।
भाई गुरदास जी, वार 10/21

दूसरी बात यह थी कि उसे, अपने पापों से कोई ग्लानि नहीं आ रही थी। अचानक एक दिन ऐसी घटना घटित हुई कि उसके पिछले जन्म के पुण्य कर्म जागृत हो उठे। घटना यूँ घटी कि खूब तेज वर्षा होने लग पड़ी फलस्वरूप एक महात्मा, जिनके हाथ में एक पिंजरा था और पिंजरे में तोता था, जाते-जाते वर्षा से बचने के लिए वहाँ पर खड़े हो गए यानि कि बीतराग के महात्मा जो कि ब्रह्मज्ञानी थे, अचानक गनका के दरवाजे के आगे आकर खड़े हो गए।

यदि हम यह कहें कि तेज वर्षा को झोंका आया और महात्मा वहाँ पर रुक गए तो ऐसी बात नहीं थी। भाई साहिब भाई गुरदास जी ने लिखा है कि ऐसा कोई कारण नहीं था कि वे अचानक ही आकर गनका के द्वार पर रुक गए। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - संत रुक गए दुआरे आ के गनका दे,
सुते उहदे भाग जाग पए।

महात्मा द्वारा अचानक आकर रुक जाना, पूरे भाग्य जागने की निशानी हुआ करती है। दरअस्ल उसका पूर्वजन्म का कोई ऊँचा कर्म फल देने के लिए तत्पर हो रहा था। महाराज जी कहते हैं कि जब तक कर्म जागृत न हों तब तक साधू का दर्शन तथा साधू का मिलाप नहीं हुआ करता है। यह गुरमति का सिद्धान्त है -

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे
भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥

अंग - 204

साधू के मिलने से क्या होता है -

मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक
जनम जनम की सोई जागी ॥ अंग - 204

पूर्ण साधू के दर्शन करते ही व्यक्ति पर असर होना शुरू हो जाता है -

आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥

अंग - 520

महापुरुषों का दर्शन यूँ ही नहीं हुआ करता है बल्कि उसका बहुत ही जबरदस्त प्रभाव हुआ करता है। दर्शन करने से सुरति बदल जाती है और बुरी मति समाप्त हो जाती है।

सन्त महाराज जी (सन्त ईशर सिंह जी महाराज) की तरफ को, जब हमारे साथीगण इकट्‌ठे होकर पटियाले जाया करते थे तो उनमें से सभी अलग-अलग प्रकार के ख्यालों वाले हुआ करते थे और वे सभी श्रद्धालु नहीं हुआ करते थे। जब हम लोग रेलगाड़ी में बैठ जाते थे तो मैं एक चीज प्रायः देखा करता था कि जब धबलान स्टेशन पर रेलगाड़ी पहुँच जाती थी तो कोई भी आपस में बात नहीं करता था, जब तक कि सारे महापुरुषों के दर्शन नहीं कर लेते थे। अब उस समय होता यह था कि अन्दर से ही परमात्मा का नाम चल पड़ता था और अपने आप ही सबके अन्दर वाहिगुरू-वाहिगुरू होने लग पड़ता था। इसका कारण क्या था? कारण यह था कि हम सबने साधू की तरफ कदम बढ़ाए होते थे। इसी प्रकार से जब हम पापों की तरफ कदम बढ़ाते हैं तो फिर उनका भी प्रभाव मन पर पड़ना शुरू हो जाता है। ये दोनों बातें इसी प्रकार से होती हैं।

वहाँ पर जाकर जब सारे लोग महापुरुषों के दर्शन करते थे तो फिर जो चोर हमारे अन्दर छिपे हुए बैठे होते थे, वे छिपना शुरू हो जाते थे -

धारना - पंजे वस आउंदे ने, संताँ दा दरशन करके।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार व ईर्ष्या आदि बहुत भयानक बीमारियाँ हैं। इन पर नियन्त्रण कर पाना अत्यन्त कठिन बात है लेकिन -

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥
जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
ना को बैरी नही बिगाना
सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ अंग - 1299

जब पूर्ण साधू की संगत मिल गई तो फिर ये सभी वश में आ जाते हैं।

श्री गुरू नानक देव जी, एक गुरसिक्ख के पास से विदा होने लगे। उसने कहा, पातशाह जी! मेरे मन में एक शंका है कृप्या आप उसे दूर करो। गुरू जी बोले, कौन सी शंका है? उसने कहा महाराज जी! यहाँ पर बहुत से महापुरुष आते हैं और जब मैं उनसे पूछता हूँ कि सन्तजनों के दर्शनों का क्या फल होता है तो वे कई प्रकार की बातें हमें बतलाते हैं लेकिन महाराज जी! मेरा मन नहीं मानता है। दरअस्ल वे फल ही इतना अधिक बताते हैं जिसे कि मानना मुश्किल हो जाता है।

गुरू जी बोले, अच्छा भाई! हम तुम्हें प्रत्यक्ष रूप में ही दिखला देते हैं। कल को भोर में उठना और सूर्योदय के समय तक उस सरोवर के पास पहुँच जाना जो कि तुम्हारे गाँव की पूरब दिशा में बना हुआ है, वहाँ पर जाकर एक वृक्ष के नीचे खड़े हो जाना, वहाँ तुम्हें, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देने वाले आएँगे। उसने ऐसा ही किया वह काफी देर तक वहाँ खड़ा रहा, जब सूर्योदय को भी काफी देर हो गई तो वह वहाँ से वापिस लौट आया।

महाराज जी ने पूछा, क्यों भाई, कोई व्यक्ति आया? वह बोला, नहीं महाराज जी! कोई व्यक्ति वहाँ पर तो नहीं आया।

गुरू जी - कोई अन्य पशु-पक्षी?

गुरसिक्ख - महाराज जी! एक कौओं का युगल वहाँ पर था वे पेड़ की टहनियों पर बैठ कर काँव-काँव कर रहे थे।

गुरू जी - कल को पुनः जाना।

गुरसिक्ख दूसरे दिन फिर गया।

गुरू महाराज जी - आज कोई आया?

गुरसिक्ख - महाराज जी! आज भी कोई नहीं आया, बस जहाँ पर कल कौवे बैठे थे तो आज उनके स्थान पर बगुलों का युगल बैठा हुआ था।

गुरू जी - कल को पुनः जाना।

वह तीसरे दिन फिर गया और जब वापिस लौट कर आया तो गुरू जी ने पूछा, क्यों भाई! कोई आया?

गुरसिक्ख - महाराज जी! व्यक्ति तो कोई नहीं मिला, लेकिन जहाँ पर कल बगुले बैठे हुए थे, वहाँ पर आज हँसों

का युगल बैठा हुआ था।

गुरू जी - कल को फिर जाना।

गुरसिक्ख हुक्म मानने वाला था, वह अगले दिन फिर चला गया। उसने क्या देखा कि आज वहाँ पर एक स्त्री व पुरुष बैठे हुए हैं लेकिन देखने में वे कुछ अलग प्रकार के प्रतीत हो रहे हैं, यानि कि वे किसी अन्य मण्डल के वासी प्रतीत हो रहे हैं। जब यह गुरसिक्ख उनके पास गया तो वह युगल उसे ही बार-बार नमस्कारें करने लग पड़ा और कहने लगा, धन्य हो गुरसिक्ख महोदय! तुम धन्य हो।

गुरसिक्ख - प्रेमीजनो! मैं किस बात के लिए धन्य हूँ?

वह युगल बोला, प्यारे गुरसिक्ख जी! आपने पूर्ण गुरू के दर्शन किए हैं और उसका फल यह हुआ है कि हम पहले दिन कौए थे लेकिन तुम्हारे दर्शनों की बदौलत हम कौवों से बगुले बन गए और तीसरे दिन हँस तथा आज हमें देव-देही प्राप्त हो गई है। देखते ही देखते वहाँ पर विबान आ गए और वे उनके ऊपर चढ़कर देव लोक की तरफ रवाना हो गए।

महाराज जी ने पूछा, बन्धु! कोई बात समझ में आई?

गुरसिक्ख बोला, नहीं महाराज जी! मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आया है।

महाराज जी बोले, प्रेमीपुरुष! पहले व्यक्ति कौए की भांति अन्दर से भी काला और बाहर से भी काला होता है। वह निन्दा चुगली करता है तथा कौए की भांति गन्दगी को अपना आहार बनाता है और पाप कर्मों में प्रवृत्त रहता है। निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, बखीली, झूठ, विषय-विकार आदि भोगों में अपना जीवन व्यतीत करता है। जब वह सन्तजनों की संगत में आ जाता है तो फिर उसका जीवन बदलना शुरू हो जाता है। लोग उसे कहने लग पड़ते हैं कि यह तो बहुत अच्छा व्यक्ति है। ऊपर-ऊपर से वह समाधि भी लगा कर बैठ जाएगा आँखें बन्द करके बैठा रहेगा लेकिन अभी उसके आन्तरिक विकार समाप्त नहीं हुए होते हैं और वही काम, वही क्रोध, वही लोभ और वही मोह आदि अपना अड्डा जमाए रहते हैं। यानि कि वह आन्तरिक तौर पर पवित्र नहीं हो पाता है। अब उसकी स्थिति बगुले की भांति हुआ करती है क्योंकि वह सत्संग में भी कुछ लाभ लेने के लिए ही आता है। इसके बाद वह सन्तजनों का वचन कमाना शुरू करता है और वचनों की कमाई करते हुए कर्म व उपासना के दो दर्जों को पार कर जाता है तथा इसके बाद ज्ञान मण्डल में प्रवेश कर जाता है। ज्ञान मण्डल में जाकर इसे सत्य व असत्य की पहचान हो जाती है, जिस प्रकार से हँस दूध पीते समय उसमें जब चोंच मारता है तो वह दूध फट जाता है। फलस्वरूप वह उसके सार भाग को खा लेता है और पानी बह जाता है। ठीक इसी प्रकार से वह, गुरुमुख दर्जे पर पहुँच कर सत्य व असत्य को पहचान लेता है। फिर उसे पता लग जाता है कि माया जो है, यह असत्य वस्तु है, इसलिए वह माया की तरफ से निर्लिप्त होकर आत्म तत्व में लीन हो जाता है।

अतः प्रेमीपुरुष! सन्तजनों का जो दर्शन होता है वह इस प्रकार से प्रत्यक्ष रूप में हुआ करता है -

संत की धूरि मिटे अघ कोट ॥ *अंग - 189*

सन्तजनों की चरण-रज, करोड़ों पापों को नष्ट कर देती है।

संत प्रसादि जनम मरण ते छोट ॥ *अंग - 189*

जन्म-मरण का कारण हउमै हुआ करती है फिर उससे पूर्ण तौर पर निजात मिल जाती है क्योंकि सन्तजन उसे नाम के मण्डल में पहुँचा देते हैं।

संत का दरसु पूरन इसनानु ॥ *अंग - 189*

आन्तरिक स्नान, बाहरी स्नान आदि पाँच प्रकार के स्नान हुआ करते हैं। यदि हम केवल शरीर का ही स्नान करें तो हमारा मन तो मैला ही रह जाता है, हमारी बुद्धि मलिन रह जाती है, हमारा अन्तःकरण तो मलिन ही रह जाता है। अतः आन्तरिक स्नान के माध्यम से हमारे सारे आचारों, विचारों और व्यवहारों का स्नान हो जाता है। अतः

संत क्रिपा ते जपीऐ नामु ॥ *अंग - 189*

जब उसकी कृपा हो जाती है तो फिर नाम के अन्दर हमारा मन लगने लग पड़ता है और हमारे अन्दर के पाप नष्ट होने लग पड़ते हैं अन्यथा नाम का रस ही नहीं आता है। यही निशानी होती है कि जब पाप समाप्त हो जाते हैं तो उस समय अपने आप ही नाम में रस आने लग पड़ेगा और मन में हमेशा यही ख्याल बना रहेगा कि चलो नाम का जप करें। उस समय व्यक्ति का अन्तःकरण शुद्ध हो गया होता है -

संत कै संगि मिटिआ अहंकारु ॥ *अंग - 189*

फिर काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार आदि सारे ही मिट जाते हैं। फिर होता क्या है? फिर पूर्ण ज्ञान की अवस्था में पहुँच कर उसकी दिव्य दृष्टि खुल जाती है और दिव्य दृष्टि खुल जाने के कारण यही संसार, परमात्मा रूप होकर दिखाई देने लग पड़ता है -

दिसटि आवै सभु एकंकारु ॥
संत सुप्रसंन आए वसि पंचा ॥ *अंग - 189*

जब सन्तजन प्रसन्न हो गए और उनका ध्यान अपने अनुसरणकर्ता पर हो गया तो फिर उस समय काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार आदि अनियन्त्रित नहीं रहते हैं बल्कि वे अपने नियन्त्रण में आ जाते हैं तथा संयम में रहकर कार्य करना शुरू कर देते हैं -

अंम्रितु नामु रिदै लै संचा ॥ अंग - 189

जो परमेश्वर का नाम है, उसका निवास हृदय में हो जाता है। अतः इस प्रकार से महाराज जी कहने लगे, प्रेमीपुरुष! जिसका भाग्योदय हो जाए -

कहु नानक जा का पूरा करम ॥
तिसु भेटे साधू के चरन ॥ अंग - 189

उसकी प्रीति, साधू के चरणों के साथ हुआ करती है। अतः -

महाँपुरखु अचानचक गनिका वाड़े आइ खलोता।
भाई गुरदास जी वार 10/21

महापुरुषों ने गनका को देख लिया कि यह तो पूरी तरह से पापों के साथ भरी पड़ी है, लेकिन इसके पूर्वजन्म के संस्कार बहुत ही उत्तम हैं। यह (गनका) इस जन्म में यह भूली हुई होने के कारण पापों को प्यार कर रही है। अब महापुरुषों की दृष्टि उसके ऊपर पड़ी फलस्वरूप उसके अन्दर परिवर्तन हुआ। अब उसने अपने द्वारा किए गए सारे पापों के बारे में बता दिया कि महात्मा जी! मैं तो इतनी बड़ी पापिन हूँ। बस आपके दर्शन करने के बाद ही आज मुझे आपने इन पापों के बारे में ख्याल आया है। उस प्रकाश के अन्दर मैंने देखा है कि मेरे जैसी पापिन शायद ही संसार पर अन्य कोई दूसरी हो। क्या मेरा भी कभी उद्धार हो सकता है?

उस समय महापुरुष बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उस महिला को वचन किया कि बेटी! साधुओं के पास उत्तम वचन हुआ करते हैं और यदि कोई उन वचनों की कमाई कर ले तो फिर उसका उद्धार हो सकता है। ऐसा महाराज जी का फुरमान है, उसे प्यार सहित पढ़ लो -

धारना - तारदे ने सानूं बचन गुराँ दे।

संतहु सागरु पारि उतरीऐ ॥
जे को बचनु कमावै संतन का सो गुर परसादी तरीऐ॥
अंग - 747

जो व्यक्ति सन्तजनों के वचनों की कमाई करता है वह पार हो जाता है और जो नहीं करता है, तो उसका पार हो पाना अत्यन्त कठिन है। अतः आप ने -

दुरमति देखि दइआल होइ
हथहूं उसनो दितोनु तोता।
भाई गुरदास जी वार 10/21

महात्मा ने उसकी कोई शुभ बुद्धि नहीं देखी बल्कि बुरी बुद्धि देखी और बुरी बुद्धि को देखकर भी दयावान हो गए तथा उसे तोता देकर नाम जपने की युक्ति बतला दी -

धारना - हथहुं दे संताँ ने तोता,
जुगती दसी नाम दी।

शुभ मति देखकर तो सभी दयावान होते ही हैं लेकिन महात्मा ने उसका रोम-रोम पापों से भरा हुआ देखकर भी यह सोचा कि यह प्रभु जी की शरण माँग रही है। उस समय आप दयावान हो गए और कहने लगे, बेटी! कोई बात नहीं, परमात्मा का द्वार तो सबके लिए खुला है और यह तो उसकी कृपा की बात है क्या पता कि पापियों पर ही गुरू जी की कृपा पहले हो जाए। जो लोग कहते हैं कि हम नाम जपते हैं, इतनी देर तक हम जागते हैं, इस प्रकार से भजन-बन्दगी करते हैं, वे तो कई बार सूखे ही रह जाते हैं। दरअस्ल उनकी 'मैं' समाप्त नहीं हो पाती है कि मैं इतना नाम जपता हूँ, इतनी वाणी पढ़ता हूँ। अब गुरवाणी के सारे फल को तो 'मैं' खा जाती है। ऐसा इसलिए होता है कि उसने आत्म समर्पण नहीं किया। अन्यथा वह तो वाहिगुरू जी का धन्यवाद करता कि आपकी कृपा की बदौलत मेरा नित्तनेम चल रहा है। आपकी कृपा के कारण ही मैं ब्रह्ममुहुर्त में जाग सका हूँ। आपकी कृपा पाकर ही मेरा मन टिक जाता है, आपकी कृपा के कारण ही मैं नाम जप पाता हूँ, इसमें मेरी मेहनत की तो कोई बात ही नहीं है। कई बार महापापी भी आगे निकल जाते हैं, बस इसमें सारी बात मन की ही है।

इस प्रकार से महात्मा ने कहा कि बेटी! तुम वचन को कमा लोगी? वह बोली, हाँ जी! आप वचन करो और मेरे सिर पर हाथ रखो ताकि मैं आपके वचन कमा सकूँ, अन्यथा मैं बलहीन हूँ, आपका वचन कैसे कमा पाऊँगी? महापुरुष बोले, बेटी! तुम चिन्ता मत करो, मैं आपको बहुत सरल वचन करना चाहता हूँ, मैं तुम्हें एक बात कहना चाहता हूँ, तुम उसके ऊपर पहरा देना। हम तुम्हें एक तोता दे रहे हैं, यह ब्रह्ममुहुर्त में उठकर राम-राम कहता हूँ। तुम ब्रह्ममुहुर्त में उठकर, स्नानादि करके पिंजरे को सामने रख लिया करना, फिर इसे कहा करना कि बोलो गंगा राम राम राम। पहले यह राम-राम कहेगा उसके बाद तुम भी कहना, राम-राम। यह नाम जपने की युक्ति हुआ करती है। यह ड्यूटी सन्तजनों की हुआ करती है -

कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु ॥

रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ॥
अंग - 1373

उन्होंने नाम जपाना होता है और नाम जपाने वाले का सम्मान कितना होता है, इस बारे में गुरू महाराज जी फुरमान करते हैं कि -

जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ अंग - 306

कहने लगे हे प्रभु जी! मुझे उस गुरसिक्ख की धूल ला देना जो स्वयं नाम जपता है तथा शेष संसार को नाम जपाता है। परमात्मा को प्यार करने वालों की यह ड्यूटी ही होती है। अतः उस समय आप कहने लगे, बेटी! इस मार्ग में चढ़ाई बहुत है -

गिआनु धिआनु सिमरण जुगति
कूंज कुरम हंस वंसु नवेला।
भाई गुरदास जी, वार 7/20

तीन चीजें हुआ करती हैं। एक कर्म होता है, एक उपासना होती है और एक ज्ञान होता है। कहने लगे जो कूँज होती है, यह अपने बच्चे दे आती है।

उडे उडि आवै सै कोसा
तिसु पाछै बचरे छरिआ ॥
तिन कवणु खलावै कवणु चुगावै
मन महि सिमरनु करिआ ॥ अंग - 10

वह सिमरन की शक्ति के द्वारा उन बच्चों को प्रशिक्षण देती है। आँखें बन्द करके बैठ जाती है। यहीं से वह बच्चों को बताती है कि अब अण्डों से बाहर निकल गए हैं और अब इस प्रकार से चोगा चुगें। वह उन्हें प्रेरणा देती है और जब तक वह, वहाँ पर पहुँचती है, तब तक बच्चे पल जाते हैं।

इस प्रकार से सिमरन के अन्दर नवधा भक्ति आया करती है, नौ प्रकार की भक्ति होती है। श्रवण भक्ति है, जिसके बारे में जपुजी साहिब के अन्दर चार पउड़िड़याँ लिखी हुई हैं। फिर सिमरन भक्ति है यानि कि अपनी याद में परमात्मा को बसाना है। कई लोग रसना के द्वारा तो नाम को बोलते रहते हैं लेकिन याद के द्वार को बन्द ही रखते हैं। मन दौड़ता हुआ फिरता है, कभी इधर चला गया, कभी उधर चला गया, फलस्वरूप वे सिमरन की अवस्था में नहीं पहुँच पाते हैं। कुछ लोग हठ भी किया करते हैं। मैडिटेशन और सिमरन में बहुत बड़ा अन्तर हुआ करता है। मैडिटेशन में केवल दिमागी कसरत होती है और इसमें केवल एक शब्द पर एकाग्रता की जाती है, जबकि सिमरन में गुरू जी कहते हैं कि तुम उस शब्द के पीछे, शब्द वाले को देखो तथा उसके साथ प्यार की लहर के साथ मिलने का यत्न करो क्योंकि नाम जपने के अन्दर भी भेद हुआ करता है -

कबीर राम कहन महि भेदु है ता महि एकु बिचारु॥
सोई रामु सभै कहहि सोई कउतकहार ॥
अंग - 1373

कहते हैं कि राम-राम या वाहिगुरू-वाहिगुरू तो सारे ही करते हैं, सभी शोरगुल मचाते हैं और ऊँची आवाज में सभी कहते हैं लेकिन इसमें भी बहुत अधिक रहस्यात्मक बात होती है। दरअस्ल जिस वाहिगुरू को वाहिगुरू कहते हो, उसका जो आकार है, उसका जो अस्तित्व है, वह हृदय में होना चाहिए और वह प्यार का रूप। प्यार तो प्यार के साथ ही मिला करता है। जब हमारे अन्दर से प्यार की तरंग उठेगी याद शक्ति बढ़ेगी, तो वह परमात्मा के द्वार तक पहुँचेगी। उस प्यार के साथ जब हम वाहिगुरू कहते हैं तो वह प्यार उधर भी तो उमड़ता है। जब उस प्यार के साथ हम एक बार भी वाहिगुरू कहते हैं तो उस तरफ भी तो प्यार की ऊर्जा प्रवाहित होने लग पड़ती है -

चरन सरन गुरु एक पैंडा जाइ चल,
सतिगुरु कोटि पैंडा आगे होइ लेत है।
एक बार सतिगुर मंत्र सिमरन मात्र,
सिमरन ताँहि बारंबर गुरु हेत है।
कबित, भाई गुरदास जी

फिर गुरू प्यार के साथ ही उसके तरफ भी ध्यान देता है। अतः सिमरन होता है याद के साथ उसका नाम जपना।

तीसरा होता है - कीर्तन। कीर्तन, कीर्तन का रूप होकर करना। एक तो यह होता है कि बाजे की सुरों को घुमाते जाना। कई तो बहुत ही सुन्दर व रसीले रागों का गायन करते हैं, कलाकरों को बहुत ही अच्छा गाना आता है, उनके पास संगीतक वाद्य भी बहुत उम्दा किस्म के होते हैं। उनके बोल भी बड़े ही विधिवत् व उनके नियन्त्रण में होते हैं लेकिन उसके साथ जो उनके आन्तरिक भाव हैं, वे सहयोग नहीं कर रहे होते हैं। वे कलाकार तो हैं लेकिन रूहानी कीर्तन तो वह है जिसमें कि आन्तरिक भाव भी साथ दें। अतः महाराज जी कहते हैं कि यह तीसरी किस्म की भक्ति हुआ करती है। चौथी होती है - पाद सेवन यानि कि चरणों की सेवा करनी पाँचवी होती है पूजा और छठी होती है नमस्कार करनी तथा सातवीं होती है - दास बन जाना या गुलाम बन जाना। गुलाम बनकर उसकी रजा में रहना और अपना जीवन का अधिकार खो देना। यदि वह सुख दे रहा है तो यह भी उसकी कृपा है-

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी
दुखि भी तुझै धिआई ॥ 2 ॥
जे भुख देहि त इत ही राजा
दुख विचि सूख मनाई ॥ *अंग - 757*

यदि वह दुख दे रहा है तो यह भी उसी की लीला है-

केतिआ दूख भूख सद मार ॥
एहि भि दाति तेरी दातार ॥ *अंग - 5*

कोई विरला है जो इस खेल को खेले। यह गुलाम का दर्जा हुआ करता है। गुलाम का कोई भी अधिकार संसार में नहीं हुआ करता है। अधिकार की जगह पर, जो भी आज्ञा मालिक की होती है, उसी के अनुसार उसे चलना पड़ता है। सातवीं प्रकार की भक्ति होती है - दास्य भाव।

इससे अगली भक्ति होती है - मित्र भक्ति यानि कि मित्र की तरह भक्ति करनी -

मित्र पिआरे नूं, हाल मुरीदाँ दा कहणा॥
तुधु बिनु रोग रजाईआँ दा ओढण,
नाग निवासाँ दे रहणा॥ *खिआल पातशाही 10*

कितनी प्यार की बात है कि तुम्हारे बिना तो मुझे रजाइयाँ भी अच्छी नहीं लगती हैं बल्कि वे नाग या सर्प की भांति डसने वाली प्रतीत होती हैं।

सबसे अन्तिम होती है - प्रेम भक्ति। सब कुछ प्रभु जी को सौंप देना। यानि कि तन, मन व धन, सब कुछ उसे सौंप देना और गुरू-परायण हो जाना -

आपु छडि सदा रहै परणै
गुर बिनु अवरु न जाणै कोए ॥ *अंग - 920*

अतः महात्मा जी कहने लगे, तुम सिमरन भक्ति करना। सिमरन करने के लिए महात्मा युक्ति बतला देते हैं। आपने कहा कि तुम पहले तोते को राम-राम कहा करना, फिर तोता बोलेगा राम-राम। यह रसना के द्वारा नाम का जप करता है। उसके बारे में महाराज जी का फुरमान इस प्रकार से है-

धारना - जिहड़ी रसना नाम ना जपदी,
तिल-तिल कर कटीओ।

नैण न देखहि साध सि नैण बिहालिआ ॥
...
रसना जपै न नामु तिलु तिलु करि कटीऐ ॥
अंग - 1362

जो नेत्र कभी सतगुरू या महात्मा के दर्शन नहीं करते हैं उन्हें तो हमेशा के लिए बन्द ही कर दो क्योंकि वे देख-देख कर ऐसा प्रभाव उत्पन्न कर लेंगे जिसके द्वारा वृत्ति और अधिक मलिन हो जाएगी जबकि साधुओं के दर्शनों के द्वारा अन्दर शान्ति आएगी और ज्ञान आएगा। इसी प्रकार से -

करन न सुनही नादु करन मुंदि घालिआ ॥
अंग - 1362

जो कान हरियश को श्रवण नहीं करते हैं, उन्हें भी बन्द कर दो क्योंकि कम से कम वे निन्दा तो नहीं सुनेगें, चुगलियाँ तो नहीं सुनेगें, ईर्ष्या की बातें तो नहीं सुनेंगे। यदि हमारी जिह्वा का हम दुरपयोग कर लें यानि कि निन्दा, चुगली कर लें तो यह इतना बड़ा नुक्सान कर सकती है जिसका कि हम अनुमान भी नहीं लगा सकते हैं। ध्यानपूर्वक सुनो क्योंकि मैंने कई बार बतलाया है। विचार को अपने हृदय में धारण करो। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर सत्संग के महात्म्य के बारे में जिक्र आता है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम ॥
अंग - 546

चलो सुनने की अवस्था को अभी मत विचारो क्योंकि वह तो बहुत ऊँची बात हुआ करती है। गुरू जी तो कथन करते हैं कि केवल सुनने मात्र से ही करोड़ों यज्ञों का फल मिल जाया करता है। यदि पूरी विधि से श्रवण करो -

सेवक सिख पूजण सभि आवहि
सभि गावहि हरि हरि उतम बानी ॥
गाविआ सुणिआ तिन का हरि थाइ पावै
जिन सतिगुर की आगिआ सति सति करि मानी ॥
अंग - 669

वह सारा हमारे लेखे में पड़ गया, समझ लो। एक-एक दिन के बढ़े हुए पुण्य खरबों में चले गए। उसे गुणा करते चले जाओ, वे खरबों में चले जाएँगे। अब प्रश्न यह उठता है कि हमारे वे सारे फल जाते कहाँ हैं? हमारा तो सारा जीवन ही कीर्तन सुनते हुए व्यतीत हो गया है। सन्तजनों के दर्शन करते हुए व्यतीत हो गया है। फिर वह फल चला कहाँ गया? हमारी झोली में तो वह फल है ही नहीं। महाराज जी कहते हैं कि इसमें दोष किसका है? दरअस्ल तुम्हारी झोली ही फटी हुई है, वह श्रद्धा से रहित है, इसलिए तुम उस फल को सम्भाल ही नहीं सके हो, वह सारा फल तुम्हारी झोली में से गिर चुका है। बाकी जो तुम्हारा चरित्र है, वह इतना गलत हो गया है कि उसने सारे पुण्यों को राख बनाकर रख दिया है। अब वे पुण्य राख कैसे बनते हैं? आप करोड़ों की रकम को लिख लो, बीस पच्चीस करोड़ की रकम को लिख लो और उन्हें गुणा करने लग जाओ, करते जाओ, करते जाओ।

(शेष पृष्ठ 44 पर)

आत्म ज्ञान

सन्त वरियाम सिंह जी
सम्पादक - प्रो. गुरदेव सिंह

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक दिसम्बर, पृष्ठ - 38)

पीर निजामुद्दीन औलिया दिल्ली में हुए हैं जो कि फरीद जी से तीसरी जगह पर थे। उनके बहुत सारे मुरीदों में से एक का नाम अमीर खुसरो था। वह दिल्ली के बादशाहों का राजकवि था और बदायूँ का रहने वाला था। जब वह सेवामुक्त हुआ तो उसे बहुत सारे उपहार, दौलत व वस्तुएँ आदि इनाम में प्राप्त हुईं। वह उन सारे इनामों को ऊँटों पर लाद कर चल पड़ा। दैवनेत से एक गरीब व्यक्ति, जिसकी लड़की की शादी थी, औलिया जी के पास मदद के लिए पहुँच गया। पीर जी कहने लगे, ऐ भद्रपुरुष! पैसा-टका तो हम लोग जमा नहीं रखते हैं, जो भी आता है, वह साथ ही साथ खर्च हो जाता है। कल को आ जाना, जो संगत हमें माथा टेकते समय भेंट स्वरूप देगी उसे तुम ले लेना। अब दूसरा दिन संगत के द्वारा कोई चढ़ावा भेंट स्वरूप आया ही नहीं। अब पीर जी ने उस निर्धन व्यक्ति को अपनी चरण-पादुकाएँ देते हुए कहा प्रेमीपुरुष! लो इन्हें ले जाओ और बेच कर अपना कार्य कर लेना। रास्ते में एक लीला घटित हुई। जहाँ पर अमीर खुसरो एक सराय में ठहरा हुआ था, वहीं पर यह भी विश्राम हेतु ठहर गया। स्वभाविक रूप से आपस में बातचीत चल पड़ी और इस व्यक्ति ने अमीर खुसरो को औलिया जी के बारे में बतलाया कि मैं पीर जी के पास कुछ धन-पदार्थ की मदद लेने के लिए गया था लेकिन उन्होंने मुझे अपनी ये पादुकाएँ पकड़ा दी हैं। अमीर खुसरो ने कहा, लाओ दिखलाओ। उसने उन पादुकाओं को अपने हाथों में पकड़ लिया और फिर अपने शीश पर रख लिया तथा कहने लगा, ये तो बहुमूल्य चीज है बताओ मुझे कितनी कीमत के बदले में दोगे? उसने कहा, इसकी कीमत दो-चार आने होगी, या फिर एक-दो रुपए होगी और इससे अधिक क्या हो सकती है? खुसरो कहने लगा, प्रेमीपुरुष! मैं इसकी पूरी कीमत तो अदा नहीं कर सकता हूँ लेकिन यदि तुम्हें स्वीकार्य है तो मेरी जिन्दगी भर की कमाई, जिसे कि मैं ऊंटों पर लाद कर लाया हूँ, इन पादुकाओं के बदले में ले लो और मुझे मेरे मुरशद की पादुकाएँ देने की कृपा करो। विचार का तात्पर्य है कि जो असली सेवक होते हैं वे हिसाब-किताब में नहीं पड़ा करते हैं बल्कि वे तो अपना सब कुछ अपने गुरू पर न्यौछावर कर दिया करते हैं -

एह किनेही आसकी दूजै लगै जाइ ॥
नानक आसकु काँढीऔ सद ही रहै समाइ ॥
चंगै चंगा करि मंने मंदै मंदा होइ ॥
आसकु एहु न आखीऔ जि लेखै वरतै सोइ ॥
अंग - 474

अतः अमीर खुसरो उन पादुकाओं के बदले में अपना सारा धन व पदार्थ देकर, पीर के पास पहुँच गया और जाकर नमस्कार की। पीर जी कहने लगे, अमीर खुसरो! तुम तो छुट्टी लेकर घर जा रहे थे, वापिस क्यों आ गए? कहने लगा, पीर जी! मुझे मेरी भूल के लिए क्षमा करना क्योंकि आपने ही अपनी चरण पादुकाएँ भेजकर मुझे वापिस बुला लिया है। उसके जबरदस्त त्याग को देखकर पीर जी अत्यन्त प्रसन्न हुए कि इसने मेरे जूतों के बदले में अपनी सारी जिन्दगी की कमाई को अर्पित कर डाला और इस बात को जाहिर भी नहीं होने दिया। खुसरो अब पुनः पीर जी के चरणों में रहकर सेवा करने लग पड़ा। पीर जी ने सोचा कि अब शरीर का समय बहुत कम ही रह गया है, इसलिए गद्दी देने के लिए अपने चेलों की परख कर लेनी चाहिए। अब आप अपने चेलों को अपने साथ लेकर चल पड़ते हैं कि चलो दिल्ली की सैर करनी है और चलते-चलते आप वैश्याओं के बाजार में पहुँच गए। इस बात को देखकर आपके बहुत सारे चेले तो वहाँ से खिसक लिए क्योंकि उन्होंने देख लिया कि पीर जी तो गलत दिशा की तरफ जा रहे हैं। पीर जी आगे जाकर एक वैश्या के चौबारे पर चढ़ गए और उसकी तरफ दृष्टि करके उसकी सुरति को ही बदल दिया जैसे कि बाइस वर्षीय बाबा भाग सिंह जी कुरी वालों ने एक वैश्या की सुरति ही बदल दी थी। अब आप कहने लगे, बेटी! क्या तुम मेरी थोड़ी मदद कर सकती हो? वह बोली, फकीर साईं! आप हुक्म करो, आप जो कहोगे, मैं करूँगी। आप कहने लगे, बेटी! मेरे 32 चेले नीचे खड़े हुए हैं, तुम कोई ऐसा मायाजाल रच दो ताकि ये सारे ही दौड़ जाएँ। वह बोली, पीर जी! मेरी गुस्ताखी माफ करना यह तो मेरे लिए बिल्कुल मामूली सा कार्य है। आप अन्दर आराम करो और सुबह तक यहाँ पर कोई भी नहीं टिक पाएगा, उसने उन चेलों को सुनाते हुए अपने नौकरों

को आवाज दी कि जब तक पीर जी अन्दर हैं, तब तक कोई दूसरा व्यक्ति अन्दर न आए और उनके लिए शराब-कवाब लेकर आओ। इस बात को सुनकर वहाँ से आधे चेले तो उसी समय खिसक गए कि। यह तो कच्चा पीर है क्योंकि वह पीर ही कैसा है जो कि पीर होकर इस प्रकार के अधोगति वाले कर्मों में पड़ जाए। जब रात के दस बज गए तो वैश्या ने बाहर आकर कहा कि पीर जी तो रात में यहीं पर रहेंगे। इस बात को सुनकर जो शेष शिष्य थे वे भी खिसक गए। उसने अन्दर जाकर पीर जी को बतलाया कि अन्य सभी चेले तो चले गए हैं, बस एक रह गया है। पीर जी बोले, बेटी! तुम उसे भी डरा-धमका कर व मार पीट करके भगा डालो। अब उसके साथ वैश्या के करिन्दों ने इसी प्रकार का व्यवहार किया लेकिन वह, वहाँ से नहीं गया। उन्होंने पीर जी को रिपोर्ट दी कि पीर जी! हमने उसके साथ कई बार मार-पीट कर ली है, कुत्तों की भांति घसीट कर दूर तक छोड़ आए हैं लेकिन वह बार-बार वापिस आ जाता है। पीर जी बाहर आकर कहने लगे, ऐ खुसरो! जब अन्य सारे चेले जा चुके हैं, तो फिर तुम क्यों नहीं जा रहे हो? वह उठकर व हाथ जोड़कर खड़ा हो गया तथा कहने लगा, हुजूर ! जिनके पास कोई जगह थी, वे तो चले गए लेकिन मेरी तो जगह ही आपके चरणों में है, इसलिए अब आप ही बताओ कि मैं कहाँ जाऊं?

किस ही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू ॥
किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही ॥

अंग - 791

उस समय पीर जी नीचे उतर आए और उन्होंने अमीर खुसरो को प्यारपूर्वक अपने आलिंगन में ले लिया तथा दोनों के नेत्रों में से प्यार का जल बहने लग पड़ा। पीर जी ने खुसरो को ब्रह्मज्ञान का भण्डार बख्श दिया और कहा खुसरो! अब तुम में और मुझ में कोई फर्क नहीं रह गया है क्योंकि तुम कसौटी पर खरे उतर गए हो।

इसी प्रकार से बाबा फरीद जी पर भी पीर जी की कसौटी लग गई है। ठण्ड का मौसम है और जोरदार वर्षा हो रही है। उधर फरीद जी ने, जो अपने मुरशद को स्नान कराने के लिए, गर्म पानी करने के लिए, जो आग दबाकर रखी थी, वह बुझ गई। फरीद जी इस बात को देखकर बहुत ही चिन्तातुर हो गया। उसने अपने मन में सोचा कि यदि मैं पीर जी को स्नान न करवा पाया तो फिर मेरी भक्ति में विघ्न पड़ जाएगा और पीर नाराज हो जाएगा, फलस्वरूप सेवा के रूप में की गई मेरी सारी मेहनत बेकार हो जाएगी। साधु संगत जी! सेवा करनी है तो बहुत कठिन लेकिन सुखदायक है। अतः फरीद जी ने सोचा कि चाहे कुछ भी हो जाए लेकिन अपने प्यारे के साथ मेरी प्रीति टूटनी नहीं चाहिए क्योंकि मुरशद को खुश रखकर ही सब कुछ बच सकता है लेकिन यदि वह नाराज हो गया फिर तो कुछ भी बचने वाला नहीं है।

गुर पीराँ की चाकरी महाँ करड़ी सुख सारु ॥

अंग - 1422

भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥

अंग - 1379

अब तेज वर्षा के दरम्यान ही वह आग लेने के लिए शहर की तरफ चल पड़ा। उसने एक गली में देखा कि एक दरवाजे में से थोड़ी-थोड़ी रौशनी आ रही है, अतः फरीद जी ने वहाँ पर जाकर दरवाजा खटखटा दिया। अन्दर से एक महिला की आवाज आई कि इस समय आधी रात के समय कौन है? आप बोले, बेटी! मैं पीर जी का मुरीद, फरीद हूँ और मुझे तुमसे थोड़ा काम है। वह कहने लगी, तुम्हें पता नहीं है कि यह एक वैश्या का घर है और यहाँ तो सीधे नर्कों की टिकट मिलती है? फरीद जी कहने लगे, बेटी! तुम नाराज मत होओ और दरवाजा खोलो। मुझे तो अपने पीर को स्नान करवाने के लिए, पानी गर्म करने के लिए आग की जरूरत है क्योंकि डेरे पर वर्षा के कारण आग बुझ गई है। उसने दरवाजा खोल दिया और कहने लगी, तुम तो सोने भी नहीं देते हो यदि पीर थोड़ी देर बाद स्नान कर लेगा तो क्या फर्क पड़ जाएगा? फरीद जी बोले, बेटी! मेरा नित्य-नियम टूट जाएगा, इसलिए मुझे थोड़ी सी आग देने की कृपा करो। वह और भी सख्त हो गई और बोली, आग मुफ्त में नहीं मिलेगी बदले में तुम्हें अपने शरीर का कोई अंग देना पड़ेगा। फरीद जी बोले, बेटी! तुम शरीर का चाहे कोई भी अंग ले लो उसके लिए मैं सहर्ष तैयार हूँ क्योंकि ''तन गन्दगी की कोठड़ी हरि हीरिआ दी खान। तन दितिआं जे हरि मिले तां भी ससता जाण।''

वह बोली, अपनी एक आँख देनी पड़ेगी। वैश्या ने एक चाकू और प्लेट उसके सामने लाकर रख दी। आप कहने लगे, बेटी! चाकू के द्वारा आप मेरी कोई भी आँख निकाल लो। वह कहने लगी, मैं नहीं निकालूँगी बल्कि तुम स्वयं निकाल कर दो। साधु संगत जी! यह कोई साधारण बात नहीं है क्योंकि कह देना तो आसान है लेकिन प्रेम को निभाना बहुत कठिन हुआ करता है -

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥

इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ *अंग - 1412*

उस समय आपने चाकू के द्वारा अपनी एक आँख को निकाल कर प्लेट में रख दिया और अपनी पगड़ी का थोड़ा हिस्सा फाड़कर आँख के जख्म पर बाँध लिया तथा आग लेकर डेरे पर पहुँच गया एवं पानी गर्म करके मुरशद का स्नान करवा दिया।

अब फरीद ने किसी से कोई बात नहीं की कि मैं तो बहुत परेशान होकर आग लाया हूँ। कोई हाय-तौबा नहीं की क्योंकि उसका यह दृढ़ विश्वास था कि मुरशद तो सर्वज्ञ हैं वे तो सब कुछ जानते हैं बल्कि वे तो मेरे साथ ही रहते हैं क्योंकि वह अपने मुरशद को अंग-संग समझता था। जब सूर्योदय हुआ तो मुरशद ने अपने चेलों को कहा, फरीद को बुलाओ। फरीद आकर हाजिर हुआ और उसने पीर जी को सिजदा किया। पीर जी ने पूछा, फरीद! आँख क्यों बाँधी है? कहने लगा, हुजूर! आँख आई हुई है। पीर जी ने कहा, आई हुई को बाँधा नहीं करते हैं बल्कि गई हुई को बाँधा करते हैं। जब फरीद जी ने पट्टी खोली तो महसूस किया कि आँख तो ठीक है और पूर्ववत् पूर्णतः ठीक है। उस समय पीर जी ने उठकर फरीद को अपने आलिंगन में ले लिया और सारी रिद्धियाँ व ब्रह्मज्ञान प्रदान करके उसे पूरा कर दिया। ज्ञान का प्रकाश उसके अन्दर हो गया, फलस्वरूप जो परमात्मा किसी को भी दिखाई नहीं पड़ता है, वह उस कण-कण में दिखाई देने लग पड़ा यानि कि फरीद जी को अब चहुँओर वाहिगुरू ही दिखाई दे रहा है -

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥
अंग - 293

गुरहि दिखाइओ लोइना ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
ईतहि उतहि घटि घटि घटि घटि
तूंही तूंही मोहिना ॥ *अंग - 407*

जो शरीर के अन्दर असली घर को दिखला दे, वह पूरा सतगुरू होता है क्योंकि इस शरीर के अन्दर ही वाहिगुरू रहता है। जब वह प्रकट हो जाता है तो फिर उसकी निशानियाँ दिखाई पड़ती हैं। जब अपने व पराए का भेद मिट जाता है, अपनी हउमै को यह व्यक्ति समाप्त कर लेता है तो फिर शेष कुछ भी नहीं रह जाता है और जब व्यक्ति का अहंभाव ही मर गया तो फिर वह परमात्मा ही बन जाता है। फिर वहाँ उल्लास ही उल्लास है फिर तो वह हैरान हो जाता है कि मैं वाहिगुरू हूँ या फिर वाहिगुरू मैं हूँ क्योंकि जब मैं की रुकावट ही समाप्त हो गई तो फिर वाहिगुरू-वाहिगुरू जप-जप कर वाहिगुरू में ही लीन हो जाता है -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ॥ दीप
लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु ॥
तार घोर बाजिंत्र तह साचि तखति सुलतानु ॥
अंग - 1291

कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूं ॥
जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू ॥
अंग - 1375

साधु संगत जी! माया के प्रभाव के कारण हमें प्रत्यक्ष रूप से विचरण करता हुआ वाहिगुरू दिखाई नहीं पड़ता है। गुरू जी कृपा करके हमारी हउमै की मैल को काट दे, फलस्वरूप हमें भी परमात्मा दिखाई पड़ने लग जाए यानि कि हम लोग भी उस परम वस्तु को हासिल कर लें जिसके लिए हमें मनुष्य शरीर की प्राप्ति हुई है। अतः पाँच प्यारों से जो गुरुमन्त्र मिल गया है, इस शब्द ने आन्तरिक शब्द के साथ मिला देना है और यह शब्द हमारे अन्दर ही चल रहा है, इसलिए इसके लिए हमें इधर-उधर भटकने की जरूरत नहीं है।

नाम की कमाई न होने के कारण स्थूल कानों को वह शब्द सुनाई नहीं पड़ता है लेकिन जब दिव्य कान प्रकाशित हो जाएँ तो फिर वह धुन सुनाई पड़ती है, इसलिए यदि लगन है तो फिर नाम के सिमरन को मत छोड़ो और उठते-बैठते व चलते-फिरते तथा काम करते नाम का जप करते रहो। मोटर चलती है, ट्रैक्टर चलता है, स्कूटर व मोटर साइकिल चलता है तो उसकी धुन के साथ नाम का जप करते जाओ। साइकिल चलाते हुए जा रहे हो या पैदल जा रहे हो तो बाएँ पैर से वाहिगुरू तथा दाएँ पैर से सतिनाम कहते जाओ। बैठकर भजन करते हो तो जब श्वास अन्दर की तरफ जाता है तो वाहि कहो जब बाहर की तरफ जाता है तो गुरू कहो। जपते-जपते ज्यों-ज्यों सुरति ऊर्ध्वगामी होती जाती है त्यों-त्यों आनन्द आता जाता है। धीरे-धीरे उस जगह पर वृत्ति पहुँच जाती है जहाँ पर कि गुरमुख की जरूरत पड़ती है। फिर वह अगला रास्ता बतला देता है लेकिन बतलाता उसी को है जो कि उसका पात्र या उसके योग्य होता है। सबसे पहले तो बन्दगी करने की, नाम की कमाई करने की आवश्यकता है उसके बाद अगला कार्य तो गुरू महाराज जी का है। न जाने वह कब प्रेमपाश में बँधकर हमारे ऊपर कृपा कर दे। यदि नाम का जप करते-करते मंजिल की प्राप्ति न हो सके तो फिर अगला जन्म मिल जाएगा। इसलिए -

बंदे बंदगी इकतीआर ॥
साहिबु रोसु धरउ कि पिआरु ॥ *अंग - 338*

सबसे मुख्य बात तो भक्ति करना होता है और भक्ति निर्मल भय के बिना नहीं हो पाया करती है। संसार में रहते हुए वैराग्य भाव हो तभी इसकी प्राप्ति हो पाती है, यदि आसक्ति है, पकड़ है, तो फिर यहीं पर आकर जन्म धारण करना पड़ता है या फिर भूत-प्रेत बन जाता है निश्चय में ज्ञान रखना चाहिए। आन्तरिक तौर पर जागते रहना चाहिए बाह्य तौर पर हुक्म की क्रिया के अनुसार जिस प्रकार से बाड़ पर पड़ी हुई साँप की केंचुल हिलायमान रहती है उसी प्रकार से प्रारब्ध के वशीभूत होकर कभी इधर और कभी उधर शरीर ने कुछ न कुछ तो करना ही है। आन्तरिक तौर पर ज्ञान परिपक्व होना चाहिए यानि कि आन्तरिक तौर पर ज्ञान का दीपक प्रज्ज्वलित रहना चाहिए और -

दीवा बलै अंधेरा जाइ ॥ *अंग - 791*

संसार में रहने के लिए तीन चीजें रोटी, कपड़ा और मकान की जरूरत होती है और ये वाहिगुरू जी ने देने ही होते हैं। वाहिगुरू अगले जन्म में प्रबन्ध करके भी किसी सतपुरुष का मिलाप करवा देता है, फलस्वरूप जीव को सही मार्ग मिल जाता है। यह मार्ग एक जन्म का भी है और एक हजार जन्म का भी है क्योंकि सारी बात तो मन की ही होती है। मनोनाश, वासनाक्षय तथा तत्व ज्ञान। जब मन समाप्त हो गया, वासनाएँ मर गईं तो फिर तत्व ज्ञान प्रकट हो जाता है। मन ने झूठी मैं को मारना है तथा मुर्दा होकर मुरीद बनना है। गुर की मति पर चलते हुए तथा गुरू को हाजिर नाजर समझते हुए गुरू के वचनों की कमाई करनी है क्योंकि मनुष्य शरीर धारण करके निज घर के वासी बनना हमारा परम मनोरथ है। गुरू के वचनों द्वारा शब्द की खोज करके निज घर स्थिर-घर या सो-दरु की प्राप्ति होती है फिर जो इन्द्रियाँ हमें दौड़ाते रहती थीं, वे मित्रवत हो जाती हैं क्योंकि फिर आन्तरिक तौर पर अजपा जाप चल पड़ता है। इसी के प्रभाव से हमारे अन्दर अकथनीय रस प्रवाहित होने लग पड़ता है जो जिज्ञासु इस घर का वासी बन जाए मैं उस गुरुमुख प्यारे का दास हूँ हमें इस पर पूर्ण विश्वास करना चाहिए और लगन सहित भजन-बन्दगी करनी चाहिए -

उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ
इहु मनु कतहु न जाइ ॥
अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ ॥
सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु ॥
सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु ॥
अंग - 1291

अतः साधू संगत जी! सेवा सिमरन करते हुए गुरू के हुक्म की कार कमाते हुए गुरू के सिक्ख ने इस मंजिल पर पहुँचना है जो कि हमारे जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। समय किसी की भी लिहाज नहीं करता है और यह तो तेजी से निकलता ही जाता है। अतः इसकी सम्भाल करो। इसके लिए सख्त मेहनत की जरूरत है। कल्युग के साथ युद्ध करते हुए तथा सतगुरू का सहारा लेते हुए सावधानपूर्वक अपने मार्ग पर आगे की तरफ बढ़ते ही जाओ और पीछे मुड़कर मत देखो। सतगुरू जी अपने सिक्ख की सदैव ही सहायता करते हैं। इस प्रकार से नाम की कमाई करके लोक तथा परलोक दोनों ही सुखी हो जाएँगे और संसार पर हमारा आना सफल हो जाएगा तथा द्वार-द्वार पर ठोकरें खाने से हम बच जाएँगे।

(पृष्ठ 28 का शेष)

जोगी जंगम अरु संनिआस।
सभ ही परि डारी इह फास॥ *अंग - 1186*

हमें सावधान करते हुए फरमाते हैं कि प्यारे! तेरे सारे धर्म-कर्म काम के एक ही वार से राख बन जायेंगे और तेरी जीव आत्मा को दुखों में डाल देंगे।

निमख काम सुआद कारणि कोटि दिनस दुखु पावहि।
घरी मुहत रंग माणहि फिरि बहुरि बहुरि पछुतावहि॥
अंधे चेति हरि हरि राइआ। तेरा सो दिनु नेड़ै आइआ॥
अंग - 403

यह चेतन माया अनेक रूपों में जीव को प्रभावित करती है। कहीं अति सुन्दर सूरत वाले बच्चों के रूप में कहीं पर स्त्री के रूप में, कहीं प्रभुता के रूप में कहीं अपने बल के रूप में, कहीं जवानी के रूप में, इसे चेतन माया कहते हैं इससे भी अधिक बलशाली तीसरी प्रकार की माया को सूक्ष्म माया कहते हैं। यह जिज्ञासु को बीच में ही दबोच लेती है इसका आकर्षण अति सुन्दर है। इसे प्राप्त करने के लिए बहुत से भ्रमित जीव चालीसे रखते हैं और आन्तरिक शक्ति प्राप्त करते हैं पर नाम जप करने वालों को यह सहंसरार दल कमल में प्राप्त हो जाती हैं। इन्हें रिद्धियां-सिद्धियां कहा जाता है। इनमें पहली सिद्धि का नाम 'अणमा सिद्धि' है। इसमें देखते ही देखते परमाणु के समान अपने आप को इतना छोटा बना लेना और किसी के हाथ न लगना, 'अणमा सिद्धि' कहलाती है।

'चलता'

ब्रहम गिआनी सद जीवै नहीं मरता

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥
नामु जपत अगनत अनेकै ॥
बेद पुरान सिंम्रिति सुधाखर ॥
कीने राम नाम इक आखर ॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥
काँखी एकै दरस तुहारो ॥
नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ 1 ॥
सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ अंग - 262

परम सम्माननीय गुरू प्यारी साधु संगत जी! आओ ख्यालों को बाहर जाने से रोकें, चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो तथा जिह्वा की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी सतिनाम श्री वाहिगुरू।

महापुरुषों ने इस संसार पर शरीर को धारण किया -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥
अंग - 749

उन्होंने अपना सारा कुछ तन, मन और धन रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट बनाकर कौम के लेखे लगा दिया। उन्होंने हम सबको एक मार्ग दिखाया। वे किरत भी करते थे, नाम भी जपते थे तथा मिल बाँट कर ग्रहण भी करते थे, लेकिन जो जिन्दगी का अन्तिम लक्ष्य उन्होंने हमें सिखाया और जहाँ पर गुरवाणी हमें पहुँचाना चाहती है, वह यह है कि -

अनहद बाणी पूंजी ॥ संतन हथि राखी कूंजी ॥
अंग - 894

महापुरुषों का कार्य यही होता है, जैसे कि सुखमनी साहिब की बाणी का भी फुरमान है और महापुरुषों के प्रयोगात्मक जीवन से भी पता चलता है। उन्होंने सारी जिम्मेवारियों को निभाया, ऐसा नहीं था कि वे जिम्मेवारियों से भाग गए थे लेकिन बड़े महापुरुष राड़ा साहिब वालों की संगत बचपन से ही ऐसी मिली कि आपने उनके प्यार में अपना सारा जीवन लेखे में लगा दिया तथा गुरू के लेखे में आजीवन प्राणिमात्र का कल्याण किया। जब पहली बार आपका मिलाप महापुरुषों के साथ हुआ तो उन्होंने कहा कि आज एक सुहागिन का मिलाप दूसरी सुहागिन के साथ हुआ है। उनका सवाल था कि -

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥ अंग - 999

यह कितनी बड़ी बात है और गुरवाणी भी कहती है कि 'सुनहु' सुनो? यानि कि सुनो! तुम कौन हो और कहाँ से आए हो? फिर आगे जवाब नहीं आता है -

एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ॥
अंग - 999

राड़ा साहिब वालों का यह सवाल तथा रतवाड़ा साहिब वालों का ऐसा आन्तरिक जवाब। आप पहले तो बिल्कुल ही चुप कर गए। संगत बैठी हुई थी महापुरुष अपनी कुर्सी पर आसीन थे।

वहाँ पर उपस्थित लोग कहने लगे, बेटा जी! आप बोलते नहीं हो? तुम्हें यही तो पूछा है कि तुम कौन हो?

आप कहने लगे, जी मुझे बताना नहीं आ रहा है, सारे लोग हँसने लगे कि तुम्हें इतना भी बताना नहीं आता है? तुम्हारा नाम ही तो पूछ रहे हैं और यह पूछ रहे हैं कि तुम कहाँ से आए हो?

लेकिन महापुरुष उस समय आन्तरिक अवस्था की बात कर रहे हैं।

तीसरी बार फिर यही बात कहने पर कि मुझे बताना नहीं आता है, वहाँ पर समाधियाँ लग गईं। 45 मिनट तक वहाँ पर ऐसा अकथनीय व असह्यनीय रस छाया कि वे दिव्यानन्द में पहुँच गए। जब महापुरुषों के नेत्र खुले तो उन्होंने वचन किया कि आज एक सुहागिन का मिलाप सुहागिन से हुआ है। यह कितनी बड़ी अवस्था है और यह महापुरुषों के बिना प्राप्त नहीं होती है। महापुरुषों ने फिर अपना सारा जीवन बड़े महापुरुषों के प्यार में ही लेखे में लगा दिया। यदि आपने कहीं पर सर्विस भी की, चाहे वह फौज में थी या सिविल में थी, चाहे आप यू.पी. गए और कृषि फार्म चलाया तो वह

सब आपने महापुरुष के मैनेजर बनकर किया। फलस्वरूप वह इस प्रकार की अवस्था बन गई -

राज महि राजु जोग महि जोगी ॥
तप महि तपीसरु ग्रिहसत महि भोगी ॥
धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ ॥
नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ ॥
अंग - 284

अतः ऐसी यह संगत है और महापुरुषों का प्यार आप सबके दिलों में समाया हुआ है। अपने वतनों से दूर परदेशों में बैठकर भी आपको इस बात की कद्र है -

इह बाणी जो जीअहु जाणै
तिसु अंतरि रवै हरि नामा॥ अंग - 797

गुरवाणी को कहीं से पढ़ लो लेकिन पढ़ो विचार करके क्योंकि -

बाणी बिरलउ बीचारसी जे को गुरमुखि होइ ॥
अंग - 935

अब गुरवाणी तो बाण मार रही है। 'श्री सुखमनी साहिब जी' की पहली अष्टपदी ही यह कह रही है कि तुम वह कार्य करो जिसे करने के लिए तुम संसार पर आए हो।

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ अंग - 263

सिमरन करने की ताकीद है। अब सिमरन करना कैसे है? उस प्यारे की याद में प्रतीक ध्यान के अन्दर बैठा जाता है। जब हम उस प्यारे की याद में बैठते हैं तो फिर वह ध्यान बन जाता है। जब हम उसे याद करते हैं तो फिर वह याद ही इबादत बन जाती है और अपने आप ही वाहिगुरू-वाहिगुरू होने लग पड़ता है, रस भर जाता है। इस प्रकार से जब हम बैखरी वाणी में बोल कर जप करते हैं तो फिर जुबान पर रस आ जाता है -

नामु कहत गोविंद का सूची भई रसना ॥
अंग - 811

यह जूठी कब होती है? यह जूठी तब होती है जब झूठी और गलत बातें बोलती है। जीभ तो वही है, गुरू जी फिर उसे कहते हैं -

रे जिहबा करउ सत खंड ॥
जामि न उचरसि श्री गोबिंद ॥ अंग - 1163

जो जिह्वा उसका नाम नहीं जपती है, तो हमें उसके सौ टुकड़े कर देने चाहिए।

अब हमारा विश्वास इस बात पर आता ही नहीं है। महाराज जी अगली अष्टपदी में सारा कुछ बतलाते हैं कि प्रभु जी के सिमरन के द्वारा तो सब कुछ हो सकता है। बस, उसकी याद में बैठने का स्वभाव बनाओ। जब स्वभाव बन गया तो फिर अपने आप ही होने लग पड़ता है। गुरू जी का फुरमान है -

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस ॥
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ॥
अंग - 7

जब हम सारे इकट्ठे होकर सामूहिक रूप से नाम अभ्यास करते हैं, महापुरुषों द्वारा बतलाई गई युक्ति के द्वारा नाम अभ्यास करते हैं तो फिर वह प्रतीक ध्यान बन जाता है, नाम चल पड़ता है। उसके आगे है फिर सम्पत ध्यान। अब ये सब बातें यूँ ही तो हो नहीं जाती हैं बल्कि इनके लिए अभ्यास की जरूरत होती है। सुखमनी साहिब जी की वाणी आगे कहती है -

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥ अंग - 283

वह वस्तु कौन सी है? वह है नाम के अन्दर स्थित होना और नाम जो है, वह सबके अन्दर विद्यमान है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥ अंग - 293

हमें यह नहीं समझना चाहिए कि हमें नाम कोई दूसरा व्यक्ति दे देगा। न तो कोई व्यक्ति नाम दे ही सका है और न ही दे सकता है क्योंकि नाम तो हमारे अन्दर पहले से ही विद्यमान है और नाम ने ही तो सबको धारण किया हुआ है-

नाम के धारे सगले जंत ॥
नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ अंग - 284

प्रायः इन बातों के भ्रम फैलाए जाते हैं कि नाम कहीं अन्यत्र मिलेगा या चलो अमुक व्यक्ति से नाम लेकर आएँ। नाम कहीं बाहर से मिलने वाली वस्तु है ही नहीं बल्कि यह तो हमारे अन्दर ही है। हाँ बाहर से हमें गुरुमन्त्र मिलता है और गुरुमन्त्र की कमाई करके हमने नाम तक पहुँचना है अथवा नाम में स्थित होना है। अतः -

राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ ॥
अंग - 491

नाम तो सभी जपते हैं लेकिन यदि गुरू जी की कृपा के द्वारा कोई गुरुमुख, सज्जन, साधू या गुरुमुख प्यारा मिल जाए और वह हमें नाम जपने की युक्ति बतला दे तो फिर रास्ता आसान हो जाया करता है। अब गनका को ही देख लो -

गनिका पापणि होइकै पापाँ दा गलि हारु परोता॥
भाई गुरदास जी, वार 10/21

अब उसकी मनोवृत्ति इतनी ऊँची तो थी नहीं कि उसे पहले दिन से ही श्वास का अभ्यास बतला दिया जाता, इसलिए महापुरुषों ने उसे नाम जपने की युक्ति बतला दी और युक्ति के द्वारा उसकी मुक्ति हो गई -

महाँपुरख आचाणचक गनिका वाड़े आइ खलोता।
भाई गुरदास जी, वार 10/21

अब सांसारिक लोग तो उसे बुरा ही कहेंगे कि यह कितनी बुरी महिला है क्योंकि शरीर का सौदा करने वाली को कौन भला कहेगा? लेकिन महापुरुष -

दुरमति देखि दइआल होइ
हथहुं उसनो दितोनु तोता।
भाई गुरदास जी, वार 10/21

उसकी बुरी मति को देखकर भी दयावान हो गए। गनका की मनोदशा के अनुसार उसे एक तोता दे दिया और उसे कह दिया कि लो बेटी! इसके साथ-साथ तुम भी राम-राम कहा करो। महापुरुष इस प्रकार से युक्ति बतला दिया करते हैं।

हम लोगों को भी उन्होंने इसी प्रकार से बतलाया है जैसे कि पाँच प्यारे अमृतपान करवाते हैं कि तुम इस प्रकार से कर लिया करो। बोलकर ही कर लिया करो यदि तुम्हारी अभी शुरूआत है। जैसे कि बच्चे ऊँची-ऊँची आवाज में अपना पाठ याद किया करते हैं, उसी प्रकार से तुम वाहिगुरू-वाहिगुरू किया करो।

इस प्रकार से सन्तजनों के पास बहुत सारी युक्तियाँ होती हैं जो कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आती हैं। वे मानसिक अवस्था के अनुसार बतला देते हैं, इसीलिए बड़े-बड़े पापियों का भी वे युक्ति के माध्यम से उद्धार कर देते हैं -

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा ॥
अंग - 632

अजामल बहुत बड़ा पापी था लेकिन महापुरुषों ने उसे युक्ति के द्वारा मुक्त कर दिया। वह किसी जानकारी का मोहताज नहीं था। वह राजपण्डित का लड़का था और राज सभा में बैठकर विचार किया करता था। अतः वह बहुत ही ऊँची पदवी पर सुशोभित था और उसने महापुरुषों के सान्निध्य को जिया था लेकिन बाद में वह कुसंगत में पड़ गया, उसके ऊपर माया का आवरण छा गया -

छिअ पुत जाए वेसुआ पापाँ दे फल इछे लहिआ।
भाई गुरदास जी, वार 10/20

वह एक वैश्या (नगरवधु) के साथ जाकर रहने लग पड़ा। अब वह शिकार करता और जीवों को मार-मार कर लाता है। धीरे-धीरे छः पुत्र उत्पन्न हो गए और अब सातवें पुत्र ने जन्म लेना था।

महापुरुषों ने कहा कि अब तुम इसका नाम नारायण रख देना। अब इसका प्रतिफल यह हुआ कि उसे अन्तिम समय में साधू का प्रतीक ध्यान आ गया। उसके ध्यान में साधू की मूर्ति आ गई -

सफल मूरति परसउ संतन की इहै धिआना धरना ॥
अंग - 531

जाँ गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई॥
अंग - 902

एक चित जिह इक छिन धिआइओ
काल फास के बीच न आइओ। *अकाल उसतति*

अतः इस प्रकार से गुरवाणी हमें प्रेरित करती है कि 'सिमरउ सिमरि सिमरि सिमरि'। यहाँ पर तीन बार वचन आया है कि कभी तो याद कर लो, लेकिन हम तो भूल गए -

भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु ॥
मानस जनम का एही लाहु ॥ *अंग - 1159*

कभी भी भूलो मत, याद करो। महापुरुष यहाँ पर आए उन्होंने युक्ति बतलाई और संगत प्रदान की -

सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥
जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ *अंग - 72*

सुखमनी साहिब जी की पहली अष्टपदी और पहली ही पंक्ति का फुरमान यानि कि एक-एक अक्षर हमें प्रेरित करता है -

एक अखरु हरि मनि बसत नानक होत निहाल ॥
अंग - 261

ये सारे अक्षर शुद्ध हैं लेकिन एक अक्षर भी हमने मन में बसा लिया तो वह कितनी महान प्राप्ति हो जाती है, चाहे इसके लिए कोई 'राम' कह लो अथवा अन्य कोई भी नाम कह लो। महापुरुष इसकी युक्ति बतला देते हैं और फिर अवस्था क्या होती है -

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥ *अंग - 283*

उस घर के अन्दर ही क्योंकि -

घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है
मनमुखा सादु न पाइआ ॥
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै
भ्रमदा भरमि भुलाइआ ॥ *अंग - 644*

यहाँ पर बाहरी तौर पर तो हमारी दौड़ लगी रहती है लेकिन गुरू महाराज जी फुरमान करते हैं कि -

बाहरि ढूढन ते छूटि परे
गुरि घर ही माहि दिखाइआ था ॥ *अंग - 1002*

इस घर के अन्दर ही जो घर को दिखला दे वही सतगुरू है -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
अंग - 1291

बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
अंग - 982

अतः गुरवाणी प्रेरित करती है कि संगत जी! नाम की तरफ को आओ!

उठत बैठत सोवत नाम ॥ *अंग - 286*

जब कार्य करते हुए, उठते-बैठते हुए, सोते-जागते हुए यह सब होना शुरू हो गया, तो फिर गुरू जी कहते हैं कि फिर अवस्था प्राप्त हो जाएगी -

कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूं ॥
जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू ॥
अंग - 1375

इह नीसाणी साध की जिसु भेटत तरीऐ ॥
अंग - 320

यह कितनी बड़ी अवस्था बन गई क्योंकि वहाँ पर तो अब 'मैं' 'तू' में बदल गई -

........ईतहि उतहि घटि घटि घटि घटि
तूंही तूंही मोहिना ॥ *अंग - 407*

फिर तो सारे घटों में वही दिखाई पड़ता है 'वाहिगुरू' घट-घट में सुनना शुरू हो जाता है, फिर बाहरी आवाजें भी परेशान नहीं करती हैं, फिर उनमें से भी खुशी प्राप्ति होती है क्योंकि हम लोग तो माया में फँस जाते हैं जबकि साधू हमें माया से बाहर निकालने की बात करते हैं। अजामल को महापुरुषों ने यही बताया कि तुम्हारे जो सातवें पुत्र ने जन्म लेना है तो उसका नाम तुम 'नारायण' रख लेना। अब पुत्र का जन्म हो गया, वह बड़ा हो रहा है, अजामल उसके साथ खेलता है, हँसता है। उधर महापुरुषों की युक्ति पूरा कार्य करती है और युक्ति के द्वारा उसे मुक्त कर दिया। इस प्रकार अब वह घबराता नहीं है, झुंझलाहट में नहीं आता है, बल्कि उसके अन्दर खुशी व उल्लास बना रहता है -

नानक भगता सदा विगासु ॥ *अंग - 2*

फिर वह खुशी के द्वारा ही अपने जीवन को सफल कर लेता है, अतः महापुरुषों के पास युक्तियाँ होती हैं, फलस्वरूप बैखरी से मध्यमा, मध्यमा से पसन्ती में नाम आ जाता है, पसन्ती वाणी में हृदय के अन्दर ऐसे अनुभव होने लग पड़ते हैं, जहाँ पर कि जिह्वा के बिना भी सिमरन शुरू हो जाता है और फिर परा वाणी के अन्दर तो ऐसी अवस्था प्राप्त हो जाती है कि फिर वह जिसका ध्यान धरता है, उसी का रूप बन जाता है। इसलिए हमें साधुओं की शरण में जाना चाहिए और वहाँ पर जाकर इस प्राप्ति को हासिल करना चाहिए। फिर अवस्था प्राप्त होने लगती है -

जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरु
सु बिनु हरि जापत है नही होर ॥ *अंग - 1265*

हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि ॥
अंग - 1420

गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै ॥
नानक गुरमुखि साचि समावै ॥ *अंग - 941*

इन सारी अवस्थाओं के बारे में हमें उन्होंने बतलाया है जिनकी हमें संगत प्राप्त हुई है। बार-बार सिमरन करते रहने से फिर हमारे अन्दर एक दिव्य ऊर्जा आ जाती है। रात में सोते समय कीर्तन सोहिला पढ़ लो, रक्षा के शबद पढ़ लो तथा जब सोने लगो तो उस समय शवासन में श्वास को देखो कि वह आ रहा है और जा रहा है।

डा. स्वामी राम जी, देहरादून वालों ने जो कि विश्व प्रसिद्ध योगी थे, रतवाड़ा साहिब आकर अपना अनुभव सांझा किया। दरअस्ल मंजिल तो सबकी एक ही है, बस रास्ते अलग-अलग हैं। आत्म मार्ग में युक्तियाँ प्रकाशित होती हैं, वैसे उनका अधिकांश साहित्य अंग्रेजी भाषा में ही लिखा हुआ है लेकिन उसका अनुवाद करके उसे प्रकाशित किया जा रहा है। वे तो सन्यासी थे और संसार से किनारा करके ही बैठे हुए थे लेकिन जब उन्होंने महापुरुषों की संगत की तो फिर उन्होंने बड़े-बड़े परोपकार किए। उन्होंने एक पुस्तक लिखी है जिसमें उन्होंने बतलाया है कि धन्य गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी का ऐसा कौन सा उपदेश था, जिसने उस सन्यासी को, उस उदासी को, बाबा बन्दा सिंह बहादुर बना दिया क्योंकि पहले तो वह लक्षमण दास बैरागी था, माधो दास था। वह पहले तो न जाने कहाँ-कहाँ घूमता रहा लेकिन जब उसे पूरा गुरू मिल गया तो वह कर्मयोगी बन गया।

इसी प्रकार से डा. स्वामी राम जी भी सन्यासी थे, लेकिन जब उन्हें महापुरुषों की संगत मिली तो वे बहुत बड़े कर्मयोगी बन गए। उन्होंने कई पुस्तकें गुरवाणी पर भी लिखीं हैं जो कि हमारे आन्तरिक मार्ग को खोलते हुए उसे सरलता से ब्यान करती हैं। अतः गुरवाणी -

(शेष पृष्ठ 44 पर)

गुरबाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वाले

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक दिसम्बर, पृष्ठ - 50)

सिरीरागु महला 3

जिनी सुणि कै मंनिआ तिना निज घरि वासु॥

हे भाई! जिनी = जिन्होंने सतगुरू जी के उपदेश को श्रद्धा और विश्वास रूपी कानों के द्वारा सुनकर माना है, तिना = उन्होंने निज = अपने स्वरूप रूपी घर में या सच्चखण्ड रूपी घर में या तुरिया पद में वासु = निवास किया है।

गुरमती सालाहि सचु हरि पाइआ गुणतासु॥

हे भाई! यदि तुम भी चाहते हो कि निज स्वरूप रूपी घर में निवास करना है तो गुरमति के धारणी बनकर सच्चे प्रभु की सालाहि = स्तुति करो। जिन्होंने स्तुति की है उन्होंने सारे गुणों के खजाने को यानि कि प्रभु जी को पा लिया है।

सबदि रते से निरमले हउ सद बलिहारै जासु॥

जो गुरू जी के सबदि = उपदेश में रते = रंगे हुए हैं से = वे निरमले = उज्वल (मैल रहित) हो गए हैं। भावार्थ उनकी जन्म-जन्मान्तरों की पापों की मैल धुल गई है और पावन हो गए हैं, हउ = मैं उनके ऊपर से सद = सैकड़ों बार अथवा हमेशा बलिहारै = कुर्बान जासे = जाता हूँ।

हिरदै जिन कै हरि वसै तितु घटि है परगासु॥

जिन के हृदयों में हरि = प्रभु जी, कृपा करके स्वयं बस जाता है, उनके हृदय में (घटों में) ब्रह्मज्ञान का परगासु = प्रकाश हो जाता है।

मन मेरे हरि हरि निरमलु धिआइ॥

हे मेरे मन! जो हरि = सबको हरा-भरा करने वाला है तथा निरमल = उज्वल स्वरूप है, उसकी आराधना करो।

धुरि मसतकि जिन कउ लिखिआ

से गुरमुखि रहे लिव लाइ॥रहाउ॥

जिनके मसतकि = माथे पर धुरि = धुर से ही प्रभु की प्राप्ति का लेख लिखा हुआ है, वे गुरमुखों की संगत करके अथवा गुरुमुख होकर प्रभु जी में लिव = वृत्ति लाहि = लगा रहे हैं।

हर संतहु देखहु नदरि करि

निकटि वसै भरपूरि॥

हे हरि = प्रभु जी संतहु = सन्तजनो! ज्ञान दृष्टि के द्वारा देखो अथवा हे सन्तजनो! हरि = प्रभु जी को ज्ञान दृष्टि के द्वारा देखो, जो भरपूरि = व्यापक प्रभु के निकटि = नजदीक ही बसै = बसता है।

गुरमति जिनी पछाणिआ; से देखहि सदा हदूरि॥

जिनी = जिन्होंने गुरू जी की मति के द्वारा उस प्रभु जी को पहचान लिया है, वे प्रभु जी को सदा = हमेशा ही हदूरि = अपने नजदीक देखते व समझते हैं अथवा वे दृष्टा रूप होकर चेतन स्वरूप को सदैव ही अपने नजदीक देखते हैं।

जिन गुण तिन सद मनि वसै

अउगुणवंतिआ दूरि॥

हे भाई! जिनके हृदय में श्रद्धा, प्रेम व भक्ति आदि शुभ गुण हैं तिन = उनके मन में हमेशा ही प्रभु जी निवास करते हैं और वे सदैव ही अवगुण करने वाले पुरुषों से दूर रहते हैं।

मनमुख गुण तै बाहरे बिनु नावै मरदे झूरि॥

जो मनमुख श्रद्धा भावना तथा प्रेम आदि गुणों से बाहरे = खाली हैं वे बिना प्रभु जी के नाम से झूरि = दुखी हो-होकर मरते हैं।

जिन सबदि गुरु सुणि मंनिआ
तिन मनि धिआइआ हरि सोइ॥

जिन = जिन्होंने गुरू = गुरू जी के सबदि = उपदेश

को श्रद्धा और विश्वास रूपी कानों के द्वारा सुनकर अथवा अभेद की साधक तथा भेद की बाधक युक्तियों के द्वारा सुनकर माना है उनके मन में सोइ = शिरोमणि हरि = प्रभु जी का प्रेम स्थापित हो जाता है और वे परमात्मा का ही रूप बन जाते हैं।

अनदिनु भगती रतिआ
मनु तनु निरमलु होइ॥

जो अनदिनु = प्रतिदिन अथवा दिन-रात परमात्मा की भक्ति में रतिआ = रंगे हुए हैं, उनका मन तथा तन, निरमल = उज्ज्वल होइ = हो जाता है, भावार्थ वे महापापों से हटकर पवित्र या शुद्ध स्वरूप हो जाते हैं।

कूड़ा रंगु कसुंभ का
बिनसि जाइ दुखु रोइ॥

जिस प्रकार से कसुम्भे का रंग कूड़ा = झूठा भावार्थ कच्चा होता है और जो पानी की बूँद पड़ने से ही बिनसि = नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार से विषय-विकारों का अथवा पदार्थों का भोग्य अथवा खाना-पहनना भी कसुम्भे के रंग की भांति कूड़ा = झूठा है। जब प्रारब्ध रूपी पानी की बूँदे पड़ने से पुण्य कर्म समाप्त हो जाते हैं तो फिर जीव दुखी होकर रोता है।

जिसु अंदरि नामु प्रगासु है
ओहु सदा सदा थिरु होइ॥

जिसु = जिन गुरमुखों के अन्दर सच्चे नाम का प्रकाश है, वे गुरमुखजन सत्य स्वरूप को पाकर हमेशा के लिए थिरु = स्थित होइ = हो जाते हैं भावार्थ उस प्रभु जी का ही रूप हो जाते हैं।

इहु जनमु पदारथु पाइ कै
हरि नामु न चेतै लिव लाइ॥

इहु = इस अमूल्य मनुष्य जन्म रूपी पदार्थ को पाइ = पाकर जो मनुष्य हरि नामु = प्रभु जी के नाम को लिव = वृत्ति जोड़कर चेतै = याद नहीं करते हैं, वे इस अमूल्य जन्म पदार्थ को व्यर्थ ही गंवा रहे हैं, इसलिए हे भाई! यह मनुष्य जन्म पदार्थ बहुत ही अमूल्य व दुर्लभ है और यह अन्य सारी योनियों का सरदार भी है।

पगि खिसिऐ रहणा नहीं
आगै ठउरु न पाइ॥

हे भाई! जब जिन्दगी की तरफ से पगि खिसिऐ = पैर खिसक गया तो फिर यहाँ पर रहना नसीब नहीं हो पाएगा और आगे परलोक में भी ठउरु = जगह नहीं पाई = मिल पाएगी क्योंकि मनमुख जीवों ने प्रभु जी की प्राप्ति करने वाले मनुष्य जन्म को विषयों में ही नष्ट कर लिया है।

ओह वेला हथि न आवई
अंति गइआ पछुताइ॥

ओहु वेला = वह समय, जो गल्तियाँ करते हुए ही हमने गंवा लिया है, वह दोबारा हाथ में नहीं आएगा। हे भाई! इसलिए फिर वे अन्तिम समय में पछुताहि = पाश्चाताप करते ही चले जाते हैं, भावार्थ मनमुख लोग तो इस प्रकार से मनुष्य जन्म को यूँ ही गंवा लेते हैं -

जिसु नदरि करे सो उबरै
हरि सेती लिव लाइ॥

लेकिन जिनके ऊपर सतगुरू जी अपनी कृपादृष्टि कर देते हैं, वे उबरै = बच जाते हैं क्योंकि उनकी वृत्ति को सतगुरू जी प्रभु जी सेती = के साथ लाइ = लगा देते हैं।

देखा देखी सभ करे
मनमुखि बूझ न पाइ॥

शेष अन्य बहुत सारे लोग उन गुरुमुखों की देखा-देखी ही कर्म-धर्म करते करते हैं लेकिन उनके ये दिखावे के कर्म-धर्म सच्चाई वाले नहीं होते हैं और उन मनमुखों को अपने स्वरूप या परमार्थ की समझ या परमात्मा की प्राप्ति की बूझ = समझ न = नहीं पाइ = पड़ती है।

जिन गुरमुखि हिरदा सुधु है
सेव पई तिन थाइ॥

जिन गुरमुखों का हिरदा = हृदय सुध = पवित्र है तिन = उनकी ही सेवा थाइ = लेखे में पई = पड़ती है, भावार्थ कपट वाले मन के द्वारा की गई सेवा सतगुरू जी के द्वार पर स्वीकार्य नहीं होती है, बल्कि शुद्ध मन से व श्रद्धा भावना के द्वारा की गई सेवा ही स्वीकार्य होती है -

हरि गुण गावहि, हरि नित पड़हि
हरि गुण गाइ समाइ॥

हे भाई! जो हरि = प्रभु जी के गुणों को कीर्तन रूप में गावहि = गाते हैं तथा प्रभु जी के गुणों को पाठ के रूप में पड़हि = पढ़ते हैं अथवा धर्म शास्त्रों का पठन करते हैं वे हरि जी के गुणों को गा-गाकर उस प्रभु जी में समाहि = समा जाते हैं। समाहि शब्द फारसी का है जिसका तात्पर्य मस्ती से

है अर्थात वे प्रभु भक्ति में मस्त हुए रहते हैं।

नानक तिन की बाणी, सदा सचु है
जि नामि रहे लिव लाइ॥

सतगुरू जी फ़ुरमान करते हैं कि तिन = उन गुरुमुख जनों के मुँह से निकली हुई बाणी सदैव ही सच्ची होती है अथवा सत्य स्वरूप के साथ जोड़ने वाले होती है जि = जो गुरुमुख जन परमात्मा के नाम में अपनी लिव = वृत्ति को लाइ = लगाकर रहे = रहते हैं, वे कभी भी मिथ्या वचन नहीं करते हैं और उनके मुख से निकले हुए वचन सदैव ही पूरे और सच्चे ही होते हैं।

(पृष्ठ 6 का शेष)

साथ जुड़ गए वे भी हमेशा के लिए अमर हो गए।

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम ॥
जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम ॥ अंग - 846

नव वर्ष की सारा संसार प्रतीक्षा कर रहा होता है और आजकल चमक-दमक व रौशनियों की बहुलता है लेकिन वास्तविक रौशनी तो गुरवाणी की है -

गुरबाणी इसु जग महि चानणु करमि वसै मनि आए॥
अंग - 67

आओ! गुरवाणी से रौशनी लेकर नाम तथा ज्ञान का प्रकाश फैलाएँ और यदि हम ऐसा करेंगे तो फिर यही समय हम सबको रौशनी भी प्रदान करेगा और सार्थक भी हो जाएगा।

आत्म मार्ग संस्था तथा रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी की तरफ से आप सबके लिए अरदास है कि आप सबके अन्दर नाम-वाणी तथा गुरू के ज्ञान का प्रकाश हो और आपका सदैव ही खुशियों और उल्लास भरा जीवन प्राप्त हो। अन्त में, नव वर्ष 2019 के आगमन पर आप सबको शुभ कामनाएँ तथा गुरू चरणों में शुभ के लिए प्रार्थना।

सन् 2019 में धन्य श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी का 500 वां प्रकाश पर्व भी विशाल स्तर पर सारे संसार में मनाया जा रहा है। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब द्वारा भी विशेष कार्यक्रम आरम्भ किए जाएंगे। समस्त पाठकगणों को अपने-अपने सुझाव भेजने के लिए निवेदन है।

(पृष्ठ 33 का शेष)

सारा कागज भर लो। बहुत बड़ी रकम आ गई क्योंकि 55 अंकों तक हम लोग गिनना जानते हैं, जब सारी रकम लिख ली, इसके बाद इसे शून्य के साथ गुणा कर दो। अब यह रकम कितनी बन गई? अब यह शून्य ही बन गई। कारण? कारण यह है कि हमने गलत कदम उठा लिया है। हमने सावधानी नहीं रखी। हमारे एक गलत कदम ने वह 55 अंकों वाली रकम को शून्य बनाकर रख दिया। ठीक इसी प्रकार से यह जो गुरू की वाणी है, इलाही वाणी है, यह हमें कहती है कि यदि तुमने सारे कर्म, धर्म कर लिए, यात्राएं कर लीं, काबा साहिब भी जा आए, हजूर साहिब भी जा आए, अड़सठ तीर्थों का स्नान भी कर लिया, सारे मन्दिरों के दर्शन भी कर आए साधुओं और सन्तजनों के दर्शन भी कर लिए। अब इससे क्या होगा? यानि कि पुण्य कर्मों की यह बहुत बड़ी रकम बन गई। लेकिन गुरू जी कहते हैं कि ऐ भद्रपुरुष!

करै निंद सभ बिरथा जावै ॥ अंग - 875

यदि तुमने एक बार भी निन्दा कर दी तो फिर यह सारी व्यर्थ चली जाएगी -

धारना - निंदा भली किसे दी नाही,
मनमुख लोकी करदे ने।

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि ॥
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि ॥
अंग - 755

'चलता'

(पृष्ठ 41 का शेष)

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ अंग - 262

अब सारा सम्बन्ध तो मन के साथ है और मन को रोकने के लिए महापुरुषों ने युक्ति बतला दी कि श्वास के ऊपर इसे नियन्त्रित कर लो -

कहै कबीरु सुनहु रे संतहु
इहु मनु उडन पंखेरु बन का ॥ अंग - 1253

मन तो दौड़ता ही है लेकिन इसे नियन्त्रित कर लो। पहले ऊँची आवाज में बोलकर दस बार वाहिगुरू कह लो, दस मिनट चुप कर जाओ और मन को नियन्त्रित करने के लिए अभ्यास करो।

वाहिगुरु जी का खालसा,
वाहिगुरु जी की फतहि।

नूरानी मिलाप - 5

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 2019 में 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे ॥

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक दिसम्बर, पृष्ठ - 51)

सत्य का जनेऊ - कुल रीति के अनुसार मेहता कल्याण दास जी द्वारा पुरोहित हरदयाल को बुलाकर जनेऊ की रस्म का दिन व समय निर्धारित कर दिया गया। मन्त्रोच्चारण के बाद पुरोहित के द्वारा जनेऊ को तैयार गया तथा चूल्हे-चौके को गोबर द्वारा लीपा गया। क्षत्रिय धर्म की मर्यादानुसार यह रस्म धर्म में प्रवेश के लिए आवश्यक थी लेकिन अज्ञान रूपी धुंध को मिटाने वाले सतगुरू जी, ज्ञान का प्रकाश प्रदान करके, प्रकाश को वितरित करने के लिए आए थे। अन्धकार से निजात दिलवाकर प्रकाश को प्रदान करना उनका मुख्य उद्देश्य था। फोकट के कर्मकाण्डों से निजात दिलवाकर जीवन की सार्थकता का ज्ञान करवाने के लिए ही उनका आगमन इस धरती पर हुआ था और जनेऊ धारण करने की रस्म में भी ऐसा ही घटित हुआ।

श्री गुरू जी ने बहुत ही सम्मानपूर्वक पुरोहित जी को कहा हे पुरोहित जी! इस रस्मी जनेऊ को पहनने से मेरी ओर से कोई भी मनाही नहीं है लेकिन इसकी बनावट मेरे अनुसार होनी आवश्यक है। मुझे आप जनेऊ पहना दो लेकिन रस्म के तौर पर ही नहीं बल्कि वह सार्थकता वाला होना चाहिए, जीवन को ज्ञान के प्रकाश में ले जाने वाला होना चाहिए। यदि आपको जनेऊ की महत्ता के बारे में ज्ञान नहीं है तो फिर आप ज्ञान के पात्र बनो। दिव्या रंग में रंगे हुए सतगुरू जी ने फुरमान किया -

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥
एहु जनेउ जीअ का हई त पाडे घतु ॥
ना एहु तुटै न मलु लगै ना एहु जलै न जाइ ॥
धंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ ॥

अंग - 471

धर्म के इन सद्‌गुणों का मनुष्य के अन्दर निवास होना आवश्यक है। दया की कपास, सन्तोष का सूत, ब्रह्मचर्य की गांठें और सच्चाई की ऐंठन इसे दी जानी चाहिए। यदि इन गुणों वाला जनेऊ तुम्हारे पास है, तो उसे लाओ, मैं उसे धारण कर लूँगा। इस प्रकार का जनेऊ ने तो कभी टूटेगा और न ही कभी मैला होगा। जो भी मनुष्य इस प्रकार का जनेऊ धारण करते हैं वे धन्यता के योग्य हैं। इस दिव्य नाद को सुनने के बाद पुरोहित हरदयाल जी की सन्तुष्टि नहीं हो पाई। इसके बाद उन्होंने कहा कि मेरे वाला जनेऊ वेद धर्म में पावन माना गया है। अब गुरू जी का दिव्य नाद पुनः गूँज उठा -

चउकड़ि मुलि अणाइआ बहि चउकै पाइआ ॥
सिखा कंनि चड़ाईआ गुरु ब्राहमणु थिआ ॥
ओहु मुआ ओहु झड़ि पइआ वेतगा गइआ ॥

अंग - 471

पण्डित जी! यह जनेऊ जो कि चार कौड़ियों वाला है, इसे तो लाकर और चौके पर बिठाकर तुम उसके गले में डाल देते हो लेकिन जब वह मनुष्य मर जाता है तो उसके अन्तिम संस्कार के समय उस जनेऊ को भी साथ में ही जला दिया जाता है। अब दरगाह में तो मनुष्य को बिना जनेऊ के ही जाना पड़ेगा, फिर उसका लाभ क्या हुआ?

अब पुरोहित जी ज्ञान के प्रकाश से प्रकाश लेने का इच्छुक हो गया। अब वह बुद्धि मण्डल की रस्मी कार्यवाई में से निकल कर वास्तविकता की तरफ जाने के लिए उतावला हुआ। अब पुरोहित जी ने कहा, हे नानक जी! फिर आप इस प्रकार के जनेऊ के बारे में बताओ जो कि दरगाह में साथ जा सके। महाराज जी ने फुरमान किया -

नाइ मंनिऐ पति उपजै सालाही सचु सूतु ॥
दरगह अंदरि पाईऐ तगु न तूटसि पूत ॥ अंग - 471

परमेश्वर का नाम तथा उसके यशगान के द्वारा उसकी कपास से सूत तैयार होता है। इस प्रकार का धारण किया गया जनेऊ दरगाह में भी साथ में जाता है। सच्चे जनेऊ की रूहानी व वास्तविक बातों को गुरू जी के नूरानी मुख से सुनकर व समझ कर पुरोहित जी तथा वहाँ पर उपस्थित अन्य लोग निहाल होकर घरों को लौटे।

बारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

वार 1

3. पउड़ी (मनुष्य जन्म की महत्व)

चउरासीह लख जोनि विचि उतम जनम सु माणसि देही।
अखी वेखणु करनि सुणि मुखि सुभ बोलणु बचन सनेही।

अर्थात - चौरासी लाख योनियों में मनुष्य शरीर उत्तम जन्म है, क्योंकि आँखें शुभ देखती हैं, कान (शुभ वचन) सुनते हैं, मुख अर्थात जिह्वा शुभ तथा प्रेम वाक्य बोलती है। भाव यह है कि पशु-पक्षी भी देखने आदि की क्रिया करते हैं, परन्तु उनमें शुभ व अशुभ का ज्ञान नहीं होता है, इसीलिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का वाक्य है, 'कबीर मानस जनमु दुलंभ है।' इसके आगे कमेन्द्रियों का कार्य बतलाते हैं -

हथी कार कमावणी पैरी चलि सतिसंग मिलेही।
किरति विरति करि धरम दी खटि खवालण भाइ करेही।

हाथों के द्वारा कार्य करें, पैरों के द्वारा चलकर सत्संग में जाएँ, धर्म की आजीविका के द्वारा स्वयं खाए तथा अपने परिवार व अन्य लोगों को खिलाएँ। भावार्थ चोरी की आजीविका न करें यथा -

गुरमुखि जनमु सकारथा गुरबाणी पड़ि समझि सुणेही॥
गुर भाई संतुसटि करि चरणामितु लै मुखि पिवेही॥

उन गुरुमुखों का जन्म सफल है, जो गुरू की वाणी स्वयं पढ़कर व समझकर अन्य सबको सुनाते हैं। भावार्थ दीपक को जला कर किसी घड़े के नीचे छिपा नहीं देते हैं बल्कि अन्य लोगों को भी उसके प्रकाश से प्रकाशित करते हैं, अपने गुरू-भाइयों को भी प्रसन्न करते हैं तथा उनके चरण धोकर व चरणामृत अपने मुँह में लेकर पीते हैं। भावार्थ अंगूठे को धोकर चरणामृत का पान करते हैं। यथा - चरन साध के धोइ धोइ पीउ।। अरपि साध कउ अपना जीउ।। दसवें स्वरूप में सतगुरू जी ने खण्डे के अमृत की मर्यादा को बाँध कर इस मर्यादा को उसमें लीन कर दिया। चरणामृत का तात्पर्य अति नम्रता से है। कठोर चित्त का चरणामृत पीना तो मजाक है।

पैरी पवणु न छोडीऐ कली कालि रहरासि करेही॥
आपि तरे गुर सिख तरेही॥

इस उपर्युक्त पउड़ी का तात्पर्य यह है कि गुरू के चरणों पर झुकना हमें नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि कल्युग के समय में नम्रता ही सच्चा मार्ग है। जो गुरुमुख इस मार्ग पर चलेंगे वे स्वयं भी पार होंगे तथा अन्य लोगों को भी पार कर देंगे (मंनै तरै तारै गुर सिख।। मंनै नानक भवहि न भिख।।)। दसवें स्वरूप में गुरू जी ने वाहिगुरू जी की फतहि की मर्यादा को शुरू किया।

4. पउड़ी (जगत कारण)

एअंकार आकार करि इेक कवाउ पसाउ पसारा।
पंज तत परवाणु करि घटि घटि अंदरि त्रिभवणु सारा।

कवाउ = वाक्य, परवाणु = वजन, अनुमान

अर्थ - (ओअंकार) परमात्मा ने एक वचन से सारी सृष्टि की रचना रच दी। भावार्थ पहले एक वाहिगुरू ही था, उसने एक वचन करके ही सारा विस्तार कर दिया। फिर पाँच तत्वों से ब्रह्मांड की रचना करके तथा स्वयं प्रत्येक शरीर में प्रवेश करके जो कि तीनों भवनों का सार रूप है, सत्ता दे रहा है। पाँच तत्वों की परवाण = तौल या अनुमान को एक समान रखते हैं ताकि कोई भी तत्व किसी अन्य पर भारी न पड़े।

कादरु किने न लखिआ कुदरति साजि कीआ अवतारा।
इक दू कुदरति लख करि लख बिअंत असंख अपारा।

कुदरत के कर्ता को किसी ने भी नहीं देखा है, उसने पहले माया को बना कर फिर अवतार (ब्रह्मादिक) बनाए हैं। एक माया से उसने लाखों ब्रह्मांड की रचना रच दी है और फिर लाखों से असंख्य बना दिए हैं। यहाँ पर चार बार कहने का तात्पर्य युगों में असंख्य तथा अपार रचना रचने से है।

रोम रोम विचि रखिऐन करि ब्रहिमंडि करोड़ि सुमारा।
इकस इकस ब्रहिमंड विचि दस दस करि अवतार उतारा।

उसने अपने एक-एक रोमकूप में करोड़ों की संख्या में ब्रह्मांड रखे हुए हैं और प्रत्येक ब्रह्मांड में दस-दस अवतार भेजे हुए हैं भावार्थ असंख्य ब्रह्मांड व असंख्य अवतार हैं।

केते बेद बिआस करि कई कतेब मुहंमद यारा।
कुदरति इकु इेता पासारा।

कई वेद और उसके कर्ता ब्यास जी हैं, कई किताबें (कुरान शरीफ) व उसके कर्ता मोहम्मद हैं लेकिन कुदरत तो एक ही है, जिसका विस्तार बेशुमार है।

5. पउड़ी (जुद आदि)

चारि जुगि करि थापना सतिजुग त्रेता दुआपर साजे।
चउथा कलिजुगु थापिआ चारि वरनि चारों के राजे।

अर्थ - उसने चार युगों की स्थापना करके सत्युग, त्रेता और द्वापर की रचना रची हुई है तथा चौथा युग कल्युग बना दिया है। इसी प्रकार से चार वर्ण और उनके राजे बनाए हुए हैं (आगे वर्णो के नाम बताते हैं)

ब्रहमण, छत्री, वैस, शूदर, जुगु जुगु एको वरन बिराजे।
सतिजुग हंस अउतारु धरि सोहं ब्रहमु न दूजा पाजे।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण हैं लेकिन स्वयं वह चारों वर्णों में एक ही स्वरूप में शोभायमान हो रहा है। सत्युग में उसने हंस का अवतार धारण करके सोऽहं ब्रह्म के बारे में बताया इसके अतिरिक्त उसने दूसरा कोई पाखण्ड सत्युग में नहीं किया -

एको ब्रहम वखाणीऔ मोह माइआ ते बेमुहताजे।
करनि तपसिआ बनि विखै वखत गुजारनि पिंनी सागे।

सत्युग में लोग एक ही ब्रह्म की आराधना करते थे तथा मोह व माया से निर्लिप्त रहते थे, वनों में जाकर तपस्या करते थे तथा कन्द मूल खाकर समय व्यतीत करते थे।

लख वरिआँ दी आरजा कोठे कोटि न मंदिर साजे।
इक बिनसै इक असथिरु गाजे॥

उस समय लोगों की आयु एक लाख वर्ष की हुआ करती थी, फिर भी वे पक्के महल व किले नहीं बनाया करते थे लेकिन आजकल लोग स्वयं को अटल मानने लग पड़े हैं।

(शेष पृष्ठ 55 पर)

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक अक्टूबर, पृष्ठ - 44)

9.

बदर दर पेशि रुखत शरमिंदा असत
बलकि खुशीदि जहाँ हम बंदा असत।

तुम्हारे मुख के सामने केवल चाँद ही शर्मिन्दा नहीं है बल्कि सारे संसार का सूर्य भी तुम्हारा गुलाम है -

चशमि मा हरगिज बगैर अज ह्क ना दीद
अै खुशा चशमे कि ह्क बीनिंदा असत।

हमारी आँख ने परमात्मा के सिवाए अन्य किसी को नहीं देखा। वाह! कितनी सौभाग्यशाली है वह आँख, जो कि परमात्मा को देखने वाली है।

मा नमी लाफेम अज जुहदो रिआ
गर गुनाहगारेम ह्क बखसिंदा असत।

हम कभी भी अपनी भक्ति व पाखण्ड की डींगें नहीं मारते हैं। यदि हम गुनाहगार हैं तो परमात्मा बख्शनहार है।

दीगरे रा अज कुजा आरेम मा
शोर दर आलम यके अफगंदा असत।

किसी अन्य को हम कहाँ से लाएँ क्योंकि उस 'एक' का ही इस संसार में सारा शोरगुल पड़ा हुआ है।

हरफि गैर अज ह्क निआइद हीचगाह
बर लबि गोया कि ह्क बखसिंदा असत।

परमात्म के सिवाए कोई दूसरा शब्द कभी भी गोया (नन्द लाल जी) के होंठों पर नहीं आता है क्योंकि परमात्मा बख्शनहार है।

10.

दरमिआनि बजमि मा जुज कि्साइ जानाना नीसत
बे-हजाब आ अंदरीं मजलिस कि कस बेगाना नीसत।

हमारी महफिल में तो बिना उस प्रियतम के अन्य किसी की कथा-कहानी ही नहीं होती है। इसलिए बिना किसी सन्देह के अन्दर आ जाओ क्योंकि इस संगत में कोई भी बेगाना नहीं है।

बिगुजर अज बेगानगीहा ओ बखुद आशना सो
हर कि बा खुद आशना शुद अज खुदा बेगाना नीसत।

तुम बेगानेपन को छोड़ दो, अन्य बातों को छोड़ दो और स्वयं को जानो क्योंकि जो भी स्वयं को जान लेता है, वह परमात्मा से बेगाना नहीं है -

शोकि मौला हर कि रा बाशद हमाँ साहिब-दिल असत
कारि हर दाना ना बाशद कारि हर दीवाना नीसत।

जिस किसी को भी परमात्मा की चाह है वही दिल का साहिब है। यह कार्य न तो प्रत्येक किसी चतुर का है और न ही प्रत्येक किसी दीवाने का है।

नासहा ता चंद गोई किसाहाइ वाअजो पंद
बजमि मसतन असत जाईक्सा ओ अफसाना नीसत।

हे नसीहत करने वाले! तुम कब तक नसीहतों के किस्सों को सुनाते रहोगे? यह तो मस्त लोगों की मजलिस है, यहाँ किस्से-कहानियों की कोई जगह नहीं है।

ई मताइ ह्क ब-पेशि साहिबानि-दिल बवद
चूं ब-सहिरा मीरवी दर गोशाइ वीराना नीसत।

यह परमात्मा का खजाना दिलों के मालिकों के पास होता है। तुम निर्जन स्थानों पर या जंगलों में क्यों जाते हो क्योंकि परमात्मा उजाड़ों के कोनों में नहीं है।

ई मताइ शौक रा अज आशकानि ह्क बखाह
जाँ कि दर जानश ब-जुज नकशि रुखि जाना नीसत।

इस शौक के खजाने को परमात्मा के प्यारों के पास से माँगो क्योंकि उनके प्राणों में प्यारे वाहिगुरू के मुखड़े और नयन-नक्शों के सिवाए और कुछ भी नहीं होता है।

चंद मी-गोई तू अै गोया खमुश सो जीं सखुन
शोकि मौला मुनहसिर बर काअबा ओ बुतखाना नीसत।

ऐ गोया! तुम कब तक इस प्रकार से कहते रहोगे इसलिए इस विषय पर अब तुम चुप कर जाओ क्योंकि परमात्मा के प्यार व शौक का आधार काबे व मन्दिर पर ही स्थित नहीं है।

11.

दिल अगर दर हलकाइ जुलफि दो ता खाहद गुजशत
अज खुतन वज चीनो माचीनो खता खाहत गुजसत।

इस विशाल बात को समझने व पाने का यत्न करो क्योंकि इस सुबह की हवा के बारे में मुझे कुछ भी पता नहीं है कि यह किधर से आई है और किधर से गुजरेगी।

बादशाहीइ जहाँ जुज शोरो गौगा बेश नीसत
पेशि दरवेशे कि उअज मुदआ खाहद गुजशत।

उस दरवेश की नजरों में जिसे कोई भी जरूरत नहीं है, उसके लिए सारे संसार की बादशाही भी किसी फालतू प्रकार के शोरगुल से अधिक कुछ भी नहीं है।

अज गुजशतन हा चिह मी पुरसी दरीं दैरि खराब,
बादशाह जहद गुजशतो हम गदा जहद गुजशत।

इस उजाड़ देश में गुजरने के बारे में तुम क्या पूछते हो? यहाँ से बादशाह ने भी गुजर जाना है और फकीर ने भी गुजर जाना है।

शिअरि गोया जिंदगी-बखश असत चूं आबि-हयात
बलकि दर पाकीजगी जि आबि बका खाहद गुजशत।

गोया के शेयर अमृत की भांति जीवन प्रदान करने वाले हैं और यह कहना भी अतिश्योक्ति नहीं होगा कि पवित्रता की दृष्टि से ये अमर-जीवन के पानी से भी अधिक प्रभाव रखते हैं।

12.

इम शब ब-तमाशाइ रुखि यार तवाँ रफत
सूइ बुति आशक-कुश अ्यार तवाँ रफत।

आज रात को उस सज्जन के मुखड़े के दीदार के लिए वह जा सकता है। वह उस चालाक तथा प्रेमीजनों के घातक माशूक की तरफ भी जा सकता है।

दर कूचाइ इशक अर चि मुहाल असत रसीदन
मनसूर सिफत बा-कदिम दार तवाँ रफत।

नि:शंक रूप से प्रेम की गली में पहुँचना अत्यन्त कठिन है लेकिन मनसूर की भांति सूली पर कदम रख कर तो वह अवश्य पहुँच सकता है।

अै दिल बसूइ मदरिसा गर मैल न दारी
बारे ब-सूइ जनाइ खुमार तवाँ रफत।

ऐ मेरे दिल! यदि तुम मदरसे की तरफ जाने की रुचि नहीं रखते हो तो कोई बात नहीं लेकिन तुम मयखाने तक तो जा ही सकते हो -

चूं खातिरम अज इशकि तू शुद रशकि गुलसिताँ
बे-हूदा चिरा जानबि गुलजार तवाँ रफत।

जब मेरा हृदय, तुम्हारे प्यार में सराबोर होने के कारण बाग से भी मुँह मोड़ सकता है तो फिर यह फुलवाड़ी की तरफ कैसे जा सकता है?

अै दिल चू शुदी वाकिफि असरारि इलाही
दर सीना-अम अै मखजनि असरार तवाँ रफत।

अै दिल! जब तुम परमात्मा के रहस्यों से वाकिफ हो जाओगे तो फिर ऐ रहस्यों के खजाने! तुम मेरे हृदय में आ ही सकते हो।

सद रौजाइ रिजवाँनसत चू दर खाना शिगुफता
गोया ब-चिह सूइ री दीवार तवाँ रफत।

जब घर में ही जन्नत के सैंकड़ों बाग खिले हुए हैं, तो फिर गोया! इन अन्य इमारतों की तरफ कोई कैसे जा सकता है?

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

गुरु नानक आगमन

(श्री गुरु नानक चमत्कार)

पद्म भूषण डा. भाई वीर सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक नवम्बर, पृष्ठ - 45)

अर्शी सन्देश (राग कौसिया)

मैं ड्ठिा रात फ्शिते हेठ आए
कि असमानाँ तों सरोदे नाल लयाए,
सरोदाँ छिड़ रहीआँ रस रंग भरीआँ
ते दफ वजदे सुहावे ताल लाए।
कि नचदे, हेठ नूं सुर ताल लाए।
चले सभ राग आवन साज चाए।
ते चलीआँ रागनीआँ नाल आवन
गले मिठे सुहावे सुर अलाए।
जिवें मोराँ तिवें पैलाँ न पैंदीआँ
जिमीं दे नाच, उनाँ नावाँ भुलाए।
जाँ दि्ता दिल, समझ गावण दी आई
गुरु आवन दा शोहला इह सुण आए :-
गुरु नानक गुरु नानक पिआरा
सुणो लोको! तुसाँ दे देश आए
तिआरी कर लवो अंदर दी सारी
कि घर बन बाग सभ कर लए सुहाए
दिल आपणे नूं बणावो तखत सुहणा
दिओ मैं आपणी हेठाँ विछाए।
सुगंधी प्रेम दी छिड़का दिओ जी
दिए आपा गुरु तों अ्ज लुटाए।
जो आपा हो गिआ आपे तों खाली
गुरु नानक तदों डेरे आ लाए।
तुसीं पिआराँ दे तद रस रंग माणो
जदों आपा इस आपे तों घुमाए।
दिसे पयारा तदों हर रंग वसदा
विछोड़ा फेर ना आ मूंह दिखाए।
उठो लोको! सुणो लोको! ते गावो :-
कि औह आए, गुरु नानक अहु आए।
बुशारत दे दिओ अज जगत ताँई
गुरु आए ते खुशीआँ नाल धर के मिलो अैदाँ
जो गुर गोदी खिडाए।
सफल जीवन, सफल जीवन हो जावे
गुरु दे अंग विच रहीओ समाए।

गीत 2

दिखा दे दिखा दे दिखा दे पयारिआ!
जरा मुखड़ा सुहावा दिखा दे सुहणिआ!
तेरीआँ चिरोकीआँ उडीकाँ स्जणा!
पुजा दे, पुजा दे, पुजा दे, पयारिआ!
तेरे नाम नूं ही मैं धिआवाँ दिन ते रातीं पई अलावाँ
पई अलावाँ वाह वा वाह
दिखा दे दिखा दे दिखा दे पयारिआ!
जरा मुखड़ा सुहावा दिखा दे सुहणिआ!
हुण गुर नानक पयारे आईं।
फेरा अज आ साडे पाईं।
फेरा पाईं वाह वा वाह।
दिखा दे दिखा दे दिखा दे पयारिआ!
जरा मुखड़ा सुहावा दिखा दे सुहणिआ!
सानूं चरनीं आन लगाईं।
सिकदे मृथे ठंढक पाईं।
ठंढक पाईं वाह वा वाह।
दिखा दे दिखा दे दिखा दे पयारिआ।
जरा मुखड़ा सुहावा दिखा दे सुहणिआँ!
आ जा वि्थाँ मेट गुसाईं
अपना आख ते ले अपनाई।
लै अपनाई वाह वा वाह।
दिखा दे दिखा दे दिखा दे पिआरिआ!
जरा मुखड़ा सुहावा दिखा दे सुहणिआ!

(20) बनारस पण्डित चुतरदास

सतगुरू जी वाराणसी आए। इन दिनों चतुरदास नामक एक बहुत ही बड़ा प्रवीण पण्डित यहाँ प्रसिद्ध था। उसने सतगुरू जी की मोहिनी मूरति देखी और प्रणाम की तथा कहने लगा हे भक्तजन! आप जल के किनारे पर बैठे हो और साधू हो लेकिन सालिग्राम और तुलसी माला कुछ भी तो नहीं है तो फिर आप पूजा किस प्रकार करते हो? भक्ति किस प्रकार करते हो? क्या आप त्यागी हो? अथवा क्या हो?

उस समय सतगुरू जी ने इशारा किया और मरदाना ने रवाब के माध्यम से बसन्त हिण्डोल की सुर आरम्भ कर दी। इसके बाद सतगुरू जी बोले -

सालग्राम बिप पूजि मनावहु सुक्रितु तुलसी माला ॥
राम नामु जपि बेड़ा बाँधहु दइआ करहु दइआला॥1॥
काहे कलरा सिंचहु जनमु गवावहु ॥
काची ढहगि दिवाल काहे गचु लावहु ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

सतगुरू जी की आत्मा की सच्चाई अलौकिक रंग तथा

अलौकिक नाद, उस पण्डित का कलेजा चीर गए। निःशंक रूप से उसका मन अहंकारी था लेकिन सच्चाई के तीर ने अपना कार्य कर ही दिया। अब वह पण्डित हैरान होकर कहने लगा, हे साधूजन! यदि यह खेती फलरहित है तो फिर सफल खेती कौन सी है? उस समय गुरू जी ने शेष शबद इस प्रकार से गाना आरम्भ कर दिया -

कर हरिहट माल टिंड परोवहु
तिसु भीतरि मनु जोवहु ॥
अंम्रितु सिंचहु भरहु किआरे तउ माली के होवहु ॥
कामु क्रोधि दुइ करहु बसोले गोडहु धरती भाई ॥
जिउ गोडहु तिउ तुम् सुख पावहु
किरतु न मेटिआ जाई ॥
बगुले ते फुनि हंसुला होवै जे तू करहि दइआला ॥
प्रणवति नानकु दासनि दासा दइआ करहु दइआला
अंग - 1171

अब वह पण्डित मोम की भांति अत्यन्त नरम दिल होकर कहने लगा, आपकी दृष्टि बहुत ऊँची है और आप अच्छे साधू भी हैं लेकिन इसके लिए कुछ विद्या की भी जरूरत होती है, यदि आप इजाजत दें तो दास कुछ सेवा करे?

यह सुनकर सच्चे सतगुरू जी ने नेत्र भर आए और तन पुलकित हो गया तथा आप बहुत ही वैराग्य भाव में बोले -

बसंतु हिंडोल महला 1 ॥
राजा बालकु नगरी काची दुसटा नालि पिआरो ॥
दुइ माई दुइ बापा पड़ीअहि पंडित करहु बीचारो ॥
सुआमी पंडिता तुम् देहु मती ॥
किन बिधि पावउ प्रानपती ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
भीतरि अगनि बनासपति मउली सागरु पंडै पाइआ॥
चंदु सूरजु दुइ घर ही भीतरि
ऐसा गिआनु न पाइआ ॥ 2 ॥
राम रवंता जाणीऐ इक माई भोगु करेइ ॥
ता के लखण जाणीअहि खिमा धनु संग्रहेइ ॥ 3 ॥
कहिआ सुणहि न खाइआ मानहि
तिन्ा ही सेती वासा ॥
प्रणवति नानकु दासनि दासा
खिनु तोला खिनु मासा ॥4॥3॥11॥ अंग - 1171

इस सारे शबद को सुनने के बाद चतुरदास कुछ घबरा सा गया और उसके अन्दर भी कुछ वैराग्य भाव सा आ गया, फलस्वरूप वह कहने लगा, ऐ हरि जी के प्यारे! क्या आप कोई अन्य विद्या भी पढ़े हो? क्योंकि आप तो शिक्षक प्रतीत हो रहे हो। आप अपने शिष्यों को क्या पढ़ाते हो? इसके बाद सतगुरू जी तथा पण्डित जी की परस्पर गोष्ठी शुरू हो गई और काफी देर तक होती रही जिसका परिणाम यह हुआ कि पण्डित सतगुरू जी के चरणों में गिर पड़ा। सतगुरू जी ने उसे नाम दान दिया और वह सिमरन करने लग पड़ा। इसका फल यह निकला कि वाराणसी में पहला सिक्खी का सितारा यही सज्जन चमका।

यह जो पारस्परिक वार्तालाप गुरू जी का और पण्डित जी का हुआ इसे गुरू जी ने एक वाणी के रूप में रचा जिसका नाम 'दक्खणी ओअंकार' प्रसिद्ध हुआ जो कि श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर दर्ज है। यह वाणी सतगुरू जी और पण्डित जी की गोष्ठी ही है।

श्री गुरू नानक देव जी रचना में यह वाणी भी कटाक्षों से भरी हुई है, जिसके आशय, शिक्षा, सुख, आनन्द व गहरी दार्शनिक बातों से भरे हुए हैं।

पटना सालसराय

1) एक निर्जन स्थान पर श्री गुरू नानक देव जी लेटे हुए हैं और मरदाना पास में बैठा हुआ कह रहा है -

महाराज जी! आप कहते हो कि परमात्मा कण-कण में व्याप्त है और यह जो कुछ भी दृष्टिमान है इसके अन्दर वह स्वयं ही बैठा हुआ है तथा यह सब कुछ उसकी पोशाक की तरह से ही है लेकिन वह मुझे इस प्रकार से दिखाई क्यों नहीं पड़ रहा है?

गुरू जी - मरदाना! तुम अच्छी तरह से देखो जब कोई दूर की चीज देखनी होती है तो उसे अच्छी तरह से नजर बाँध कर ही देखना चाहिए। ठीक इसी प्रकार से तुम अपने मन को स्थिर करो उसे टिकाओ, जब वह अच्छी तरह से टिक जाएगा तो फिर परमात्मा की कृपा से वह तुम्हें भी दिखाई पड़ने लग पड़ेगा।

मरदाना - महाराज जी! मैं तो बहुत अच्छी तरह से नजरों को गड़ाकर देखता हूँ लेकिन फिर भी परमात्मा की झलक दिखाई नहीं पड़ती है। आपने कहा था कि नाम को जपा करो, मैं नाम भी खूब जपता हूँ और अब तो चलते-फिरते भी जपता हूँ। हे परमात्मा के प्यारे जी! आप कृपा करो और दीदार बख्शो!

गुरू जी - मरदाना! और जपा करो तथा मन को टिकाया करो। देखो सूझवान लोग हरे रंग के तरबूज के अन्दर की लालिमा को देख लेते हैं। देखो! तुम बहुत ही अच्छी सुरत वाले हैं और बहुत ही सुलझी हुई नजर से प्रत्येक आवाज या सुर को पहचान लेते हो जबकि तुम्हारे पास साईं द्वारा प्रदत्त कोई विशेष नजर नहीं है। देखो! सारा संसार बोलता है, आवाजें निकालता है, किसी न किसी सुर पर बोलता है, कोई खरज पर बातें करता है, कोई रिषभ पर, कोई पंचम पर और कुछ लोग गाते भी हैं, लेकिन इन आवाजों के बारे में कुछ पता नहीं चल पाता है कि यह आवाज किस सुर की है? दूसरी तरफ तुम्हें एकदम से पता चल जाता है कि यह आवाज पंचम की है, यह गन्धार की है और यह निषाध

है? तुम किस प्रकार से कह देते हो कि यह तो रामकली है? तुम उसे किस तराजू पर तौलते हो? कौन से माप के द्वारा मापते हो? कौन से शीशे में डालकर देखते हो? कौन से पारखी तत्वों को मिलाकर परख करते हो? बस तुम्हारा निजत्व किसी खास समझ के अनुसार स्वत: ही बता देता है कि यह तो कानड़ा है, यह कल्याण है, यह तीन तार है और यह चार तार है। तुम बताओ कि तुम यह सब कैसे परख लेते हो?

मरदाना - महाराज जी! यह तो बहुत लम्बे समय से गाते रहने के कारण और आन्तरिक तौर पर सुरति को जोड़-जोड़ कर अन्तर समझते हुए तथा सुनते व सुनाते हुए अपने आप ही समझ हो आई है।

गुरू जी - मरदाना! तुम बिल्कुल ठीक कह रहे हो, यह समझ स्वत: ही हो जाती है। रबाब के ऊपर तो तारें ही हैं, लेकिन प्रत्येक सुर के लिए तुम्हें पता है कि यहाँ पर से टंकार करने पर खरज उठती है, यहाँ पर पंचम उठती है। दूसरी तरफ तुम्हारे गले में से भी सारी सुरें निकलती हैं, अब तुम्हीं बताओ कि तुमने कौन-कौन से जगह रिषभ या गन्धार के लिए ढूँढी है? और कौन सी अंगुलियों के द्वारा शरीर के किसी टुंकार देने वाले साधन को समझ-समझ कर पर्दों को कम्पन में लाते हो? तुम सोचकर बताना कि तुम उसी गले में से और उसी हवा के द्वारा किस प्रकार से सारी सुरें और हजारों तानें पृथक-पृथक कर लेते हो? और तुम्हें किस प्रकार से अपने अन्दर के प्रत्येक टिकाने की इतनी गहरी समझ आ गई है?

मरदाना - महाराज जी! यह तो आपने बहुत ही बड़ी बात कही है क्योंकि मुझे गले की नलिकाओं की तो कोई समझ नहीं है और मैंने कभी उन जगहों को देखा भी नहीं है कि जहाँ से सातों सुरें और तानें निकाली जाती हैं, लेकिन फिर भी आश्चर्य की बात है कि जो मन चाहता है, वही राग निकलता है, वही तान उठती है, वही सुर निकलती है। यह समझ नहीं आती है कि यह सब कैसे होता है?

गुरू जी - फिर तुम्हारे अन्दर कोई न कोई ऐसी कला या समझ है कि जिसके द्वारा तुम राग की सारी बातों को परख लेते हो। तुम जैसा भी राग अपने अन्दर से निकालना चाहते हो उसी प्रकार का निकाल लेते हो, वैसे तुम्हारे सामने न तो कोई पट्टी है, न कोई कागज है, न दवात है, न हकीम की दुकान है, न कोई पारखी तख्त है, न कोई नापने का साजोसामान है, न गिनती के अंक हैं, बस तुम्हारे अन्दर अपने आप से ही यह समझ है कि तुम सभी प्रकार की सुरों को निकालकर विभिन्न प्रकार के रागों में स्वत: भी खेलते हो तथा दूसरों को भी मस्त कर देते हो तथा जन साधारण के मन को उठाकर किसी दिव्य संसार में ले जाते हो, किसी दिव्यानन्द में ले जाते हो।

तुम बतला सकते हो कि क्या तुम्हारे पास इस प्रकार की कोई समझ है, जिसे तुम देखते तो हो लेकिन बता नहीं सकते हो?

मरदाना - ठीक है जी।

गुरू जी - ठीक इसी प्रकार से जपते-जपते नाम का सिमरन करते-करते, जुड़ते-जुड़ते अपने निजत्व में अपने आप ही एक ऐसी समझ आ जाती है कि जिसके द्वारा वह परमात्मा, जिसकी पोशाक तो दिखाई पड़ती है लेकिन स्वयं दिखाई नहीं पड़ता है। वही परमात्मा जो कि सबका पालक है, वह अनेकानेक लीलाएँ करता हुआ दिखाई पड़ने लगता है। अत: फिर उसके अन्दर एक समझ पैदा हो जाती है, जिसके कारण कण-कण में परमात्मा का ही जलवा दिखाई पड़ने लगता है -

सोरठि महला 1 ॥
अलख अपार अगंम अगोचर ना तिसु कालु न करमा ॥
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा॥
साचे सचिआर विटहु कुरबाणु ॥
ना तिसु रुप वरनु नही रेखिआ साचै सबदि नीसाणु ॥ रहाउ ॥
ना तिसु मात पिता सुत बंधप ना तिसु कामु न नारी॥
अकुल निरंजन अपर परंपरु सगली जोति तुमारी ॥
घट घट अंतरि ब्रहमु लुकाइआ घटि घटि जोति सबाई॥
बजर कपाट मुकते गुरमती निरभै ताड़ी लाई ॥ 3 ॥
जंत उपाइ कालु सिरि जंता वसगति जुगति सबाई ॥
सतिगुरु सेवि पदारथु पावहि छूटहि सबदु कमाई॥4॥
सूचै भाडै साचु समावै विरले सूचाचारी ॥
ततै कउ परम तंतु मिलाइआ नानक सरणि तुमारी ॥
अंग - 597

मरदाना - (लम्बा श्वास छोड़ते हुए) पातशाह! कभी मेरी सुरति को भी आप यह समझ प्रदान करो ताकि मुझे भी कभी राग की सुरों की भांति इस सुर की भी समझ आ जाए। आप तो गुरू हो इसलिए मेरे बज्र कपाटों को भी खोल दो। मुझे बात तो समझ में आ रही है लेकिन मैं क्या करूँ?

गुरू जी - मरदाना जी! अब तो रात बहुत हो गई है, इसलिए अब सो जाओ। कल को तुम्हें इस बारे में और भी समझ आ जाएगी कि यह एक दृष्टि है जो कि तुम्हारे अन्दर विद्यमान है। बस आवश्यकता है तो इस बात की है कि नाम सिमरन के माध्यम से उसे प्रकट कर लो।

अब मरदाना, गुरू जी को मत्था टेककर और कुछ दूरी पर जाकर जमीन पर ही लेट गया और तारों को गिनता-गिनता और उनके अन्दर परमात्मा की झलक को देखने का ध्यान धरता-धरता सो गया।

'चलता'

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए. एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक दिसम्बर, पृष्ठ - 53)

जब हम चेतन होकर इन्हें समझना शुरू करते हैं, जीवन के मूल्यों को जानने लगते हैं, जीवन की लहरों को जानने लगते हैं तो उसके बाद हम स्वयं जान सकते हैं, समझ सकते हैं। फिर हम स्वयं का शोधन कर सकते हैं। जब हम चेतन होकर सच्चाई जानने लगते हैं तो हमें ज्ञान होने लगता है। सर्वाधिक अच्छा दिन हमारे लिए वही होता है जब हम संसार की सलाहें व विचारों से मुक्त हो जाते हैं।

निषेधात्मक भावनाओं का बहाव - मूल संवेग या मनोभाव है - काम अथवा कह सकते हो - इच्छा और यही सारी समस्याओं की जड़ है तथा यही निषेधात्मक भाव का श्रोत है। इच्छा से ही गुस्से की भावना जन्म लेती है। यदि हमारी इच्छा की पूर्ति न हो तो फिर हमारे साथ क्या होता है? फिर हम गुस्से में आ जाते हैं। अगली निषेधात्मक भावना है - मोह। जिस चीज के साथ हमारा मोह हो अथवा जिस चीज को हम चाहते हैं, जब वह मिल जाती है तो हम कहते हैं कि मेरी इच्छा पूरी हो गई है लेकिन अन्य लोगों को देखो वे अपनी इच्छा को पूरा नहीं कर सके इसलिए मैं बहुत महान हूँ, उत्तम हूँ। इस प्रकार का अभिमान हमारे अन्दर उस समय आता है जिस समय कि हम लालच के द्वारा देखते हैं और हम यह देखते हैं कि दूसरों के पास वह नहीं है जो हमारे पास है। दूसरी तरफ जब हम यह देखते हैं कि जो दूसरों के पास है वह हमारे पास नहीं है, तो फिर हमें ईर्ष्या होती है। अगली भावना है - लालच। यह वह है जब हम वह प्राप्त कर सकते हैं, जिसकी हमें आवश्यकता है लेकिन फिर हम और चाहते हैं और चाहते हैं। इसके बाद आता है - हउमैवाद। यह उस समय जन्म लेता है जब हम स्वयं को पूर्णता से पृथक कर लेते हैं। हउमैवाद की जड़ है - वहम या भ्रम। जब हम सच्चाई से झूठ की तरफ चले जाते हैं तो वह भ्रम की स्थिति होती है। वास्तव में यदि देखा जाए तो हममें से किसी को भी हउमैवाद की जरूरत नहीं है क्योंकि हम लोग तो हउमै के योग्य ही नहीं हैं, समर्थ ही नहीं हैं क्योंकि हम तो एक फूल का भी निर्माण नहीं कर सकते हैं, हम तो एक घास का तृण भी नहीं बना सकते हैं। हमारा तो शरीर भी अपना नहीं है बल्कि यह हमारे लिए है, हम इसे प्रयोग में ला सकते हैं। वास्तव में शरीर तो हमारा है ही नहीं। हमारे शरीर का तो मालिक वही है, वही हमें शक्ति प्रदान करता है। वास्तव में जो कुछ भी है, वह उस 'एक' का ही है। जब हम किसी चीज को अपनी बनाना चाहते हैं यानि कि उस पर कब्जा करना चाहते हैं तो फिर वहाँ पर हउमैवाद आ जाता है।

इन निषेधात्मक भावों के श्रोत को जानकर हम अपने जीवन को सकारात्मक दिशा में ले जा सकते हैं। यह बात हमेशा याद रखो कि भाव के आगे बुद्धि की कोई शक्ति नहीं है लेकिन यदि बुद्धि का तुम अच्छी तरह से प्रयोग कर लो तो फिर तुम भावों का शोधन करके इन्हें सकारात्मक बना सकते हो। भावनाओं के सही प्रयोग को सीखकर तुम अपने जीवन को सफल बना सकते हो। संसार की सर्वोत्तम प्राप्तियों को मनुष्यों ने विसमाद की अवस्था में ही प्राप्त किया है। हम सालों तक लगातार मैडिटेशन करते रहते हैं, कुछ भी नहीं हो पाता है, कुण्डलिनी जागृत नहीं हो पाती है, लेकिन फिर अचानक एकदम भावना जागृत हो जाती है और वह हमें दूर ले जाती है, अतीत में ले जाती है, फलस्वरूप हम सारी सीमाओं को तोड़कर गहराई में चले जाते हैं, चेतन बिन्दु पर पहुँच जाते हैं।

चार प्राचीन प्रेरणाएँ

यदि हम अपनी भावनाओं के माध्यम से कार्य करना चाहते हैं तो सबसे पहले हमें अपने आप को शान्त करना पड़ेगा, अपने मन को शान्त करना पड़ेगा। दरअस्ल हम अपनी भावनाओं का अच्छी तरह से प्रयोग ही नहीं करते हैं, उन्हें अच्छी तरह से प्रकट ही नहीं होने देते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि हमारे और अतीत के बीच में मन एक दीवार की तरह से आ जाता है। हमें मन के सारे कार्यों के बारे में पता होना चाहिए, हमें अच्छी तरह से उन्हें जान लेना चाहिए। यह जानना कोई कठिन बात नहीं है कि संवेग या भावनाएँ कहाँ से आती हैं? इनके श्रोत हैं - खाना, काम, सोना तथा आत्म

रक्षा। इन चारों प्राचीन प्रवृत्तियों को प्राचीन प्रेरणाएँ कहा जाता है, श्रोत कहा जाता है। यह कहना अत्यन्त कठिन है कि कौन सी प्रवृत्ति अधिक शक्तिशाली है और कौन सी कम शक्तिशाली है लेकिन हम इसके प्रभाव को देख सकते हैं कि किसका प्रभाव अधिक है यानि कि कौन सी प्रवृत्ति हमारे जीवन को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित करती है। हमें यह देखना चाहिए कि क्या हम आवश्यकता से अधिक खाते हैं? वह इसलिए खाते हैं क्योंकि हम जो कुछ भी खा रहे हैं, उसके माध्यम से शरीर को पूरी खुराक नहीं मिल रही है। इसलिए शरीर और अधिक खाने की माँग करता है और हम लोग अधिक खाना खाते हैं। अतः यह एक कारण है। दूसरा कारण यह है कि हम ठीक तो खा रहे हैं लेकिन पूरी तरह से चबाकर नहीं खा रहे हैं। हम सोचते हैं कि हमारे मेदे के अन्दर दाँत लगे हुए हैं, फलस्वरूप खाना ठीक तरह से हज्म ही नहीं होता है। हम में से बहुत सारे लोग बहुत ही अच्छा व पौष्टिक खाना खाते हैं लेकिन उसे हम अच्छी तरह से चबा कर नहीं खाते हैं, यही कारण है कि आवश्यकता से अधिक खा जाते हैं। शरीर को पौष्टिकता देने के चक्कर में हम अधिक खा लेते हैं। यदि हम ठीक तरह से चबाकर खाएँ तो फिर हम थोड़ा ही खाएँगे। यदि हम खाने को अच्छी तरह से चबाकर खाएँगे तो फिर हम थोड़ा ही नहीं खाएँगे बल्कि मोटे भी नहीं होंगे और यदि हम मोटे हो चुके हैं तो वह मोटापा भी घट जाएगा। एक और भी कारण है जिस कारण से लोग अधिक खाते हैं और वह कारण है - खानापूर्ति के लिए खाना। यदि हमारी किसी अन्य इच्छा की पूर्ति नहीं हो सकी है मान लो काम की पूर्ति नहीं हो सकी है तो हम चुपचाप जाकर खाना खाने लगते हैं और फिर सो जाते हैं। सुबह उठकर हम मानते ही नहीं हैं कि हमने रात में खाना खाया था। वास्तविकता तो यह है कि हम अचेतावस्था में ही आवश्यकता से अधिक खा जाते हैं। धीरे-धीरे हमारी यह आदत पक जाती है और फिर हम यह कहने लग पड़ते हैं कि मैं क्या करूँ? यह तो मेरे वश से बाहर की बात है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि सादा खाओ यानि कि सादा आहार ग्रहण करो।

एक बहुत ही रोचक बात है कि खाना पहले शरीर को दिया जाता है, उसके बाद ही यह मन पर प्रभाव डालता है जबकि काम पहले मन में आता है फिर शरीर के माध्यम से उसकी तृप्ति होती है। उदाहरण के तौर पर यदि एक आदमी सपने में खाता है तो सुबह उठकर वह पुनः खाएगा लेकिन काम के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं है। इससे पता चलता है कि काम पहले मन पर प्रभाव डालता है, उसके बाद में उसका प्रभाव शरीर पर पड़ता है, जबकि भोजन पहले शरीर को दिया जाता है, उसके बाद उसका प्रभाव मन पर पड़ता है। अतः भोजन को और काम के श्रोत पृथक-पृथक हैं।

यदि हम अपने जीवन में सुरक्षित नहीं हैं, यदि हमें खाने के लिए पर्याप्त नहीं मिल पा रहा है अथवा हमें यह चिन्ता है कि आगे क्या होगा? अगले सालों में क्या होगा, तो फिर हम खाना पूर्ति ही करेंगे। फिर हम सुरक्षित होने की कोशिश कैसे करेंगे? हो सकता है कि फिर हम अधिक काम में लीन हो जाएँ, फिर हम चाहे कुछ भी करते रहें लेकिन फिर हम काम के बारे में ही सोचते रहेंगे। यदि हमने इस विचार को ठीक समय पर रोका नहीं तो फिर हमारा जीवन भी तबाह हो सकता है। काम तो हो लेकिन एक सीमा तक होना ही उचित है। मेरे द्वारा विचार का तात्पर्य है कि पृथक-पृथक अंग काम किस प्रकार से करते हैं, पृथक-पृथक प्रेरणाएँ हमें उत्तेजित किस प्रकार से करती हैं।

प्रत्येक व्यक्ति खुश रहना चाहता है। क्या तुम जानते हो कि सबसे अच्छी व सबसे ऊँची खुशी क्या है? तुम शायद कहोगे कि काम की पूर्ति लेकिन जब काम की पूर्ति हो जाती है तो फिर वे सो जाते हैं, उस समय फिर नींद ही उनके लिए सर्वाधिक खुशी है। जो लोग खूब मेहनत करते हैं, तन, मन व धन से मेहनत करते हैं, मानवता की भलाई के लिए काम करते हैं, अपने कर्तव्यों का निर्वाह तन व मन से कर रहे हैं, तो उन्हें बहुत कम ही सोने की जरूरत है। उदाहरण के तौर पर महात्मा गाँधी जी केवल दो घंटे ही सोते थे, दूसरी तरफ बहुत से लोग तो ऐसे हैं जो कि जब सोकर उठते हैं तो उसके बाद भी सोते ही रहते हैं। दरअस्ल उनकी नींद ठीक तरह से पूरी नहीं हुई होती है। भले ही हम नींद की गोली लेकर ही सोएं, हम गाढ़ी नींद में नहीं सो पाते हैं। दरअस्ल हमें गाढ़ी नींद में सोना आता ही नहीं है। इसके लिए हमें चेतन होकर आराम करना सीखना पड़ता है। हमें योगनिद्रा को सीखने की जरूरत है। जिस प्रकार से हम खाना खाने के लिए स्वयं को तैयार करते हैं, अपनी सुरक्षा का ख्याल रखते हैं, इसी प्रकार से हमें सोने के लिए भी स्वयं को तैयार करना सीखना पड़ेगा। हमें स्वच्छा से सोने का ढंग भी सीखना पड़ेगा और स्वेच्छा से ही जागने की कला भी सीखनी पड़ेगी। यदि हम अपनी इच्छा शक्ति को जागृत कर लें, उसे शिक्षित कर लें और उसे कहें कि मैंने प्रातः चार बजे उठना है तो फिर हम अवश्य उठेंगे।

'चलता'

भावार्थ – तात्पर्य यह है कि सत्युग के लोगों का बर्ताव व उनकी जीवन शैली को कथन करते हुए आप वर्तमान समय में लोगों के बर्ताव को चित्रित करते हुए आप कथन करते हैं कि आजकल लोग स्वयं को अटल मानते हैं और बहुत अधिक अहंकार करते हैं। यथा –

ईकि बिनसै ईक असथिरु मानै अचरजु लखिओ न जाई।।

तथा

मारकंडे ते को अधिकाई जिनि त्रिण धरि मूंड बलाए।।

अर्थात मारकण्डेय ने, जिसकी आयु ब्रह्मा जी से भी अधिक थी, ने स्वयं को नाशवान मानते हुए कोई पक्के महल व किले नहीं बनाए।

यहाँ पर भाई गुरदास जी प्रचलित मतों का वर्णन कर रहे हैं और मतों के सहारे सारे हाल को बतला रहे हैं जबकि वे अपने सिद्धान्त का वर्णन कहीं अन्यत्र करेंगे।

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब – (12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी – 21 जनवरी, दिन सोमवार।

(रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति – माघि, 14 जनवरी, दिन सोमवार (प्रात: 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार – माह के प्रथम रविवार को दिन के 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूिवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूिवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine

S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286

Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust

SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286

Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust

Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603

RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्तूबर	नवम्बर	दिसम्बर
☐	☐	☐	☐	☐	☐	☐	☐	☐	☐	☐	☐

नाम/Name पता/Address..

....

..............Pin Code............. Phone .... E-mail :..........................

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. डा. जतिन्दर सिंह तथा डा. कोमलप्रीत कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार
8. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
9. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
10. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
11. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
18. बीबी हरनीत कौर	फिजियोथैरेपिस्ट	सोमवार तथा शुक्रवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ROOHANI KIRTAN UPDESH

SANT HARPAL SINGH JI RATWARA SAHIB WALE

in accordance with the tradition set by
His Holiness Sant Waryam Singh ji Ratwara Sahib Wale

ROOHANI PARCHAR FERI **CANADA & USA**

Sant Baba Waryam Singh ji Maharaj Ratwara Sahib

in Canada

4TH JANUARY TO 28TH JANUARY 2019

SANT BABA HARPAL SINGH JI RATWARA SAHIB

-: Programme :-

TORONTO | 4TH JANUARY TO 6TH JANUARY

Gurdwara Nanaksar Thath

Ishar Darbar, 9954
The Gore Road Brampton,
on L6P 0A7, CANADA
FRIDAY 4TH : 6.00 PM TO 7.30PM
SATURDAY 5TH : 6.00 PM TO 7.30PM

EDMONTON | 7TH JANUARY TO 20TH JANUARY

GURDWARA MILLWOOD

2606, MILL WOODS RD E, EDMONTON
AB T6L 5K7, CANADA
MONDAY 9TH TO 12TH TUSEDAY
(TIMING : 7.00PM TO 08.00PM)
SATURDAY 12TH : 12.00 PM TO 01.00PM
SUNDAY 13TH : 12.00 PM TO 01.00PM
MONDAY 13TH : 06.00 PM TO 07.00PM
TUESDAY 14TH : 07.00 PM TO 08.00PM

CALGARY | 16TH JANUARY TO 17TH JANUARY

GURU RAM DASS DARBAR

5225 84 ST NE,
CALGARY, AB, T3J 4A9
WEDNESDAY 16TH : 6.00PM TO 8.00PM
THARS 17 : 6.00 8.00

VANCOUVER | SURREY, KELOWNA, TERRACE, PRINCE RUPERT

21ST JANUARY TO 28TH JANUARY

Gurdwara Dukh Nivaran Sahib, Surrey, BC
MONDAY 21TH TO 27TH SUNDAY
(7.30pm to 8.30pm)

-:Contact :-

TORONTO

BHAI AVTAR SINGH - + 1-647-968-5039
BIBI JATINDER KAUR - + 1-416-277-1375
BHAI JATINDERPAL SINGH - + 1-647-720-4100
BHAI MANJIT SINGH - + 1-317-488-8831
BHAI JAGJIT SINGH JAGGA - + 1-647-922-7878

EDMONTON

BHAI RAGHUBIR SINGH RAJU - +1-431-336-4555
BHAI HARDEEP SINGH LALL - +1-780-990-6738
BHAI MALKIT SINGH KHABRA - +1-780-340-3851

VANCOUVER | SURREY | KELOWNA

BHAI PARAMJIT SINGH - +1-260-600-3072
BHAI JASBIR SINGH RANU - +1-758-240-4610
BHAI TEJINDER SINGH (SONU) - +1-250-899-6781
BHAI AMIT ARORA JI - +1-604-767-4781
BHAI HARJIT SINGH (JITI) - +1-778-987-4701
BHAI HARJIT SINGH - +1-778-713-7400

CALGARY

BHAI GURMEJ SINGH BAINS - +1-403-589-7311
BHAI JASBIR SINGH - +1-587-436-7933

Any time you need any information for program, should you contact this number
Bhai Raghubir Singh Raju +1-431-336-4555

in USA

1TH FEBRUARY TO 30TH MARCH 2019

-: Programme :-

2ND FEB TO 3RD FEB 2019

Sikh Temple of Bluegrass
257 Swigert Ave
Lexington, KY 40505
Mandeep Singh
+1-859-595-9141
SATURDAY 2ND : 06.00 PM TO 8.00 PM
SATURDAY 3RD : 11.59 PM TO 01.30PM

9TH FEB TO 10TH FEB 2019

Gurdwara Sikh Sangat
10950 Southeastern Ave
Indianapolis, IN 46239
SATURDAY 9TH : 6.00 PM TO 8.00PM
SUNDAY 10TH : 12.00 PM TO 1.15PM
BHAI MANJIT SINGH : PH : 317-188-883

18TH FEB TO 24TH FEB

GURDWARA DASMESH DARBAR
7000 WIBLE RAD
BAKERSFIELD CA-93313
CONTACT : DR PARAMVIR SINGH RAHAL,
PH : 661 619 1200
BHAI MANJIT SINGH : PH : 317-188-883
18TH TO 23TH FEB : 6.45PM TO 7.45
SUNDAY 24TH : 12.00 PM TO 1.00PM

25TH FEB TO 28TH MARCH
CALIFORNIA

1ST MARCH TO 3RD MARCH
TURLOCK

4TH MARCH TO 10TH MARCH
SANJOSE

15TH MARCH TO 17TH MARCH
EL SOBRANTE

18TH MARCH TO 21ST MARCH
SAN JOSE

-: Contact :-

BHAI MANJIT SINGH
+ 1-317-488-8831
BHAI AMARDIP SINGH
+ 1-408-393-8199

Books Authored by Sant Waryam Singh ji Maharaj Ratwara Sahib and Atam Marg Magazine Will be available at all the Programs in Canada & USA

कलम के धनी, ज्ञान के सूरज, प्यार के सागर, आत्म मार्ग के संस्थापक श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह महाराज जी, आत्म मार्ग कार्यालय रतवाड़ा साहिब में मैगजीन के लिए अपने अनुभवी प्रवचन लिखते हुए।

लोक-परलोक संवारने वाला उपहार

जैसे कि समूह साधु संगत जी तथा पाठकगणों को विदित ही है कि आत्म मार्ग अप्रैल **1995** से शुरू होकर अपनी यात्रा को तय करते हुए चौबीसवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। नव वर्ष के शुभ आगमन पर बहुत सारे प्रेमीजन अपने स्नेहियों व मित्रगणों को उपहार दिया करते हैं और यह एक सांसारिक रीति है। इस विधि से हम अपने स्नेहियों, मित्रों व सज्जनों की खुशी लेने के चाहवान होते हैं। आओ! हम लोग भी अपने गुरू जी की खुशी प्राप्त करें। प्यारे महापुरुषों के वचनों पर पहरा देते हुए नव वर्ष के आगमन पर अपने स्नेहियों, रिश्तेदारों व सज्जनों-मित्रों को इस प्रकार का उपहार दें जिससे कि उन्हें लोक व परलोक के सुख प्राप्त हो जाएँ। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हम आत्म मार्ग के कम से कम पाँच सदस्य बनाकर गुरू जी की पावन वाणी का सन्देश उन तक पहुँचाने का प्रयत्न करें और यही उनके लिए लोक और परलोक संवारने का असली उपहार होगा। गुरवाणी के साथ जुड़कर लोक व परलोक दोनों को संवारा जा सकता है। गुरवाणी के साथ किसी को जोड़ देना बहुत बड़ा पुण्य है।

कलि महि ऐहो पुंनु गुण गोविंद गाहि।।

महापुरुषों के वचनों को हम याद रखें कि जिस घर में आत्म मार्ग पत्रिका आएगी यह पढ़ी व सुनी जाएगी, उस घर के दुख व दर्द दूर हो जाएँगे तथा उन्हें भरपूर खुशियाँ प्राप्त हो जाएँगी क्योंकि इसमें से नाम वाणी के साथ जुड़ने की प्रेरणा मिलती है। गुरवाणी के साथ जुड़ जाने से तमाम दुखों व क्लेशों का नाश हो जाता है - 'दुख रोग संताप उतरे सुणी सची बाणी।।'

धन्यवाद सहित

आत्म मार्ग संस्था